निवेदन ।

स्वर्गीय शाह छोटालाल जीवनलाल गुजरातीके सुप्रसिद्ध लेखक थे। उन्होंने गुजरातीमें कई अच्छी अच्छी पुस्तकें लिखी है । गुजरातमें उनकी पुस्तकोंका बहुत आदर है । यह छोटीसी पुस्तक उन्हींकी 'रोगने टाळवाना अने नीरोग रहेवाना उपायो' नामक पुस्तकका अनुवाद है। हमें आशा है कि हिन्दीमें भी यह पुस्तक आदरकी दृष्टिसे देखी जायगी और इसमें बतलाये हुए उपायोंसे हिन्दी-भाषा-भाषी भाई अपने खोये हुए स्वास्थ्यको प्राप्त करनेमें समर्थ हो सकेंगे ।

—प्रकाशक ।

—" ओपधियॉ किसी एक रोगको दूर करके भी अपने वहुतमे प्रभ और अश छोड जाती हैं, पर प्राकृतिक चिकित्साकी ओपधियॉ—व्याया शुद्ध वायु, हलका और सुपाच्य भोजन आदि—रोगोंको अच्छा करनेके अतिरि शरीरके और दूसरे वहुतसे विकारोंको भी नष्ट कर देती हैं । इस प्रकार रोगको वलपूर्वक जहॉका तहॉ दवाया नहीं जाता वल्कि उसका कारण दूर कि जाता है । "

—उपवास-चिकित्सा

* * *

—" ओपधियोंसे और नये रोग उत्पन्न होते हैं, इस लिए ओपधि मानों एक और रोग उत्पन्न करना है । ओपधियोंसे एक रोग तो अवश्य जाता है पर और अनेक रोग उत्पन्न भी हो जाते हैं । क्या कारणोंसे कार हो सकते हैं ? क्या विप निकालनेमे विप सहायक हो सकता है ? क्या दि विकार नष्ट हो सकते हैं ? क्या प्रकृति एककी अपेक्षा दो दोपोंको सहन कर सकती है ? कदापि नहीं । "

—डा० ट्रा

* * * *

—" रोगी औपधोंसे कभी अच्छे नहीं होते, उन्हे स्वय प्रकृति अच्छ करती है । "

—प्रो० स्मि

* * * *

—' मैंने कई रोगोंमे ओपधियोंका प्रयोग नहीं किया, जिसका फल वहुत अच्छा हुआ । अव मुझे निश्चय हो गया है कि ओपधियोकी अपेक्षा प्रकृति मनुष्यके निरोग होनेमें वहुत सहायता मिलती है । "

—प्रो० पार्कर

* * * *

—"प्रकृतिकी पुकार पर जो लोग ध्यान नहीं देते उन्हें तरह तरहके रोग और दु ख घेर लेते हैं, परन्तु पवित्र प्राकृतिक जीवन वितानेवाले जगलके प्राणी रोग-मुक्त रहते हे और मनुष्यके दुर्गुणों और पापाचारोंसे भी वचे रहते हैं । "

—रिटर्न टू नेचर ।

* * * *

—" हम यह नहीं जानते कि रोगी हमारी ओपधियोंसे अच्छे होते हैं या प्रकृतिकी कृपासे । सम्भवत उन्हें रोटी रूपी गोलियाँ ही अच्छा करती हैं ।

—प्रो० कार्सन ।

इसी विषयकी अन्य पुस्तकें।

१ उपवास-चिकित्सा।

यह भी प्राकृतिक चिकित्सा-सम्बन्धी ग्रन्थ है। इसमें बतलाया गया कि उपवास नीरोग होनेकी सबसे अच्छी दवा है। भयंकरसे भयंकर र असाध्यसे असाध्य बीमारियाँ उपवास करनेसे आराम हो सकती क्यों हो सकती है और कैसे हो सकती है, इन प्रश्नोंका उत्तर विस्तारसे दिया गया गया है। जिन प्रसिद्ध प्रसिद्ध लोगोंने उप- ने रोग अच्छे किये हैं, उनके उदाहरण भी दिये गये हैं। स्वास्थ्य- न्धी और भी सैकडों आवश्यक बातोंपर इसमें विचार किया गया जो उपवास नहीं कर सकते है, उनके जानने और समझनेकी भी सैकड़ों बाते हैं। प्रत्येक आरोग्याभिलाषीको यह ग्रन्थ पढना चाहिए। े ही समयमें यह दूसरी बार छप गया है। मू० ॥।)

२ योग-चिकित्सा।

योगकी बहुत ही सरल क्रियाओंसे तमाम रोगोंको दूर करनेके ाय इस पुस्तकमें बतलाये गये है। एक साधु महात्माकी स्वानुभवसे ी हुई उत्तम पुस्तक है। मू० =)

३ दुग्ध-चिकित्सा।

केवल दूधके सेवनसे भी तरह तरहके रोग आराम हो जाते हे और त्तम स्वास्थ्य हो जाता है। इस पुस्तकमें वैज्ञानिक पद्धतिसे इसी ातको पुष्ट किया है और दूधका सेवन किस प्रकार करना चाहिए, यह च्छी तरह समझाया हे। मू० =)

पता—

मैनेजर, हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगाँव—बम्बई

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज ।

हिन्दी-संसारमे यह ग्रन्थमाला सबसे अच्छी और सबसे पहली है। पिछले सात आठ वर्षोंमे इसने हिन्दीसाहित्यकी सबसे अधिक सेवा की है। हिन्दीभाषा-भाषियोंके लिए यह आदर और अभिमानकी चीज है । इसका जिस तरह अन्तरंग मनोहर होता है, बहिरंग भी उतना ही आँखोंको शीतल करनेवाला होता है। अर्थात विषयकी गभीरता, उपयोगिता और रचना-सौन्दर्यके साथ साथ इसका प्रत्येक ग्रन्थ कागज, छपाई, सफाई, जिल्दबन्दी आदिकी दृष्टिसे भी उत्कृष्ट होता है । इसी कारण वर्तमान ग्रन्थमालाओंमे इसकी ग्राहकसख्या सबसे अधिक है, और थोडे ही समयमे इसके अधिकाश ग्रन्थोंके दो दो तीन तीन संस्करण हो चुके है । इसके प्राय सभी ग्रन्थोंकी पत्रसम्पादकों और दूसरे विद्वानोंने मुक्तकण्ठसे प्रशसा की है।

प्रत्येक हिन्दीप्रेमीको इसका स्थायी ग्राहक बन जाना चाहिए । आठ आने प्रवेश फीस जमा करा देनेसे चाहे जो इसका स्थायी ग्राहक बन सकता है। स्थायी ग्राहकोंको बहुत लाभ होता है । वे सीरीजके ग्रन्थोंके एक तरहसे कमीशन एजेण्ट, बन जाते हैं। क्योकि उन्हें सीरीजके तमाम ग्रन्थ—ग्राहक होनेसे पहले निकले हुए और आगे निकलनेवाले—पौनी कीमतमें दिये जाते है। चाहे जिस ग्रन्थकी चाहे जितनी प्रतियाँ, चाहे जितने बार वे इसी पौने मूल्यमे मँगा सकते है । पूर्वप्रकाशित ग्रन्थोंका लेना न लेना उनकी इच्छा पर निर्भर है परतु आगे निकलनेवाले सभी ग्रन्थ उन्हें लेने पडते हैं।

अब तक सीरीजमें नीचे लिखे ३७ ग्रन्थ निकल चुके हैं । इसका विस्तृत परिचय हमारे बडे सूचीपत्रमे मिलेगा । उसे मंगाकर पढिए। सीरीजकी नियमावली भी उसीमे देखिए।

उपन्यास।

प्रतिमा	१।)
आँखकी किरकिरी	१॥=)
शान्ति-कुटीर	॥=)
अन्नपूर्णाका मन्दिर	॥)
छत्रसाल	१॥)
हृदयकी परख	॥=)

गल्प-गुच्छ।

फूलोंका गुच्छा	॥-)
नवनिधि	॥=)

नाटक।

दुर्गादास	१)
प्रायश्चित्त	।)
मेवाड़पतन	।)
शाहजहाँ	॥)

उस पार	१)
ताराबाई	१)
नूरजहाँ	१)
भीष्म	१≈)
चन्द्रगुप्त	१)
सीता	।।-)

जीवनचरित ।

आत्मोद्धार	१)
अब्राहम लिंकन	।।≈)
काबूर	१)

नीति और सदाचार ।

मितव्ययता	।।।≋)
चरित्रगठन और मनोबल	≋)
सफलता और उसकी साधना	।।।)
स्वावलम्बन	१।।)
मानव-जीवन	१।≈)

विविध विषय ।

छाया दर्शन	१।)
चौबेका चिट्ठा	।।।)
बंकिम निबन्धावली	।।।≈)
स्वदेश (रवीन्द्र)	।।≈)
देशदर्शन	३)
शिक्षा (रवीन्द्र)	।।-)
उपवास-चिकित्सा	।।।)
सूमके घर धूम	≋)
आयर्लण्डका इतिहास	१।।।=)

प्रकीर्णक-पुस्तक-माला ।

सीरीजके सिवाय हमारे यहाँसे कुछ फुटकर पुस्तकें भी समय समय पर प्रकाशित हुआ करती हैं । अब तक नीचे लिखी उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं । यह पुस्तकमाला अनियमित है । इस लिए इसके स्थायी ग्राहक नहीं बनाये जाते ।

व्यापार शिक्षा	।।-)
युवाओंको उपदेश	।।-)
कनक-रेखा	।।।)
शान्तिवैभव	।-)
लन्दनके पत्र	≋)
अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा ।	≈)।।
पिताके उपदेश	≈)
सन्तान-कल्पद्रुम	।।।)
कोलम्बस	।।।)
ठोक पीटकर वैद्यराज	।-)
बूढ़ेका ब्याह (काव्य)	।≈)
बच्चोंके सुधारनेके उपाय	।।)
अस्तोदय और स्वावलम्बन	१≈)
भारत रमणी (नाटक)	।।।≈)
देवदूत (काव्य)	।≈)
दुग्धचिकित्सा	≈)
श्रमणनारद	≈)
मणिभद्र (उपन्यास)	।।≈)
योगचिकित्सा	≈)
विधवा-कर्तव्य	।।)
अंजना-पवनंजय (काव्य)	≈)।।
जैनसाहित्यका इतिहास	।≈)

मैनेजर, हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, पो० गिरगाँव-बम्बई ।

प्राकृतिक चिकित्सा

प्रस्तावना।

इस ससारमें करोडों प्राणी और जीव-जन्तु ऐसे है जो विना दवा खाये ही अपने रोग मेट सकते है और अपनी जातिके खाने योग्य भोजन खाकर निरोग रहते है। वे केवल निरोग ही नहीं रहते बल्कि अपने शरीरमें उत्तम वल और शक्ति भी पैदा कर लेते है। इस लिए अपनेको बुद्धिमान् समझनेवाला और सृष्टिके सब प्राणियोंसे अपनेको श्रेष्ठ माननेवाला मनुष्य यदि जन्मसे यही समझता है कि ओषधियोंके खाये विना रोग मिटते ही नहीं, तथा गोलियॉ, पाक या तॉवा आदि धातुओंकी भस्म खाये विना शरीरमें शक्ति वढती ही नहीं, तो यह बडे ही खेदका विषय है। मृत्युपर्यन्त मनुष्य इसी भ्रममें पडा रहता है। जहाँ किसीको कुछ शारीरिक व्याधि हुई अथवा ज्यों ही बीमार होकर कोई खाटपर पडा त्यों ही उसकी अवस्था देखनेके प्रयोजनसे आनेवाले स्नेही तथा सबंधी लोग सबसे पहले यही प्रश्न किया करते है कि 'कोई दवा दी जाती है या नहीं?' 'किसकी दवा दी जाती है?' 'क्या दवा दी जाती है?' इत्यादि। केवल इतना ही नहीं, बल्कि जो दवा चलती होती है उससे यदि कुछ लाभ नहीं मालूम पड़ा हो तो सर्वज्ञकी ... कोई नई दवा भी बतलाने लगते है। सर्वत्र मनुष्योंकी ऐसी ही प्रवृत्ति

देखनेसे मालूम होता है अधिकाश व्यक्तियोंकी यही दृढ धारणा है कि ओपधि खाये विना रोग दूर ही नहीं होते। मंदाग्निसे, भारी परिश्रमसे, चितासे, दुराचारसे अथवा ऐसे ही अन्य किसी कारणसे जिन लोगोंका शरीर निर्वल और क्षीण होगया है वे यही समझ लेते है कि कोई वल-वढानेवाली दवा खाये बिना ताकत नहीं आनेकी। लोगोंके मनमें दृढ-ताके साथ समाये हुए इस विचारके परिणाममें प्रतिदिन हजारों और लाखों नई नई दवाइयाँ निकलती रहती हैं। सवेरा हुआ नहीं कि एक न एक नई दवाका विज्ञापन हाथमें आही जाता है। समाचारपत्र हाथमें लीजिए तो आगे पीछे और वीचमें दवाओंके विज्ञापन दृष्टिके सामने आही जाते है। घरमेंसे वाहर निकलिए तो दरवाजेपर अथवा गलीमें मकानोंकी दीवारोंपर मोटे मोटे अक्षरोंमें छपे हुए दवाओंके नोटिसोंपर नजर पड ही जाती है। कोई नई पुस्तक लेकर देखिए तो उसमें भी ये ही विज्ञापन सर्वव्यापी ईश्वरकी नाई मौजूद रहते है। और कहाँ तक कहा जाय। यदि आप कोई साहित्यसम्वंधी मासिक-पत्र हाथमें लें, व्यवहार-नीति आदिका उपदेश देनेवाला कोई पत्र या पत्रिका पढने वैठें, अथवा धर्म, तत्त्वज्ञान और वेदांत जैसे गहन विपयोंकी आलोचना करनेवाले मासिकपत्रोंको हाथमें लें, तो उनमें भी लज्जा-जनक शब्दोंमें लिखे हुए दवाओंके विज्ञापन दिखाई पडे विना न रहेंगे। वात क्या है? वात है यह कि आजकल पैसा पैदा करनेके वहुतसे मार्ग तो हो गये है वंद; इसलिए जहाँ तहाँसे दस पाँच वनस्पतियाँ इकट्ठी करके और उन्हें कूट-छानकर उनकी गोलियाँ तैयार करके भोले लोगोंके हाथ वेचकर पैसा खींचनेका धन्धा अनेक लोग ले वैठे हैं। “ विना दवाओंके रोग दूर नहीं होते ” ऐसा विश्वास करनेवाले असंख्य प्रजाजन इन दवाई वेचने-वालोंसे दवाइयाँ खरीदते और उनका घर भरते है। पिछली वीस पचीस वर्षोंमें हजारों नई दवाइयाँ निकली है। कोई तो खानेके साथ ही पेटमें

पहुँचकर तुरंत नया खून तैयार कर देती हैं, कोई ऐसी है जिसकी एक ही शीशी पीने पर बुड्ढा जवान हो जाता है, कोई ऐसी लाजवाब है कि उसके खानेसे एक साथ ही वे सब रोग चले जाते हैं जिनकी संख्या वैद्यक शास्त्रमें गिनाई गई है और फिर शरीरका रंग ताबेकी नाई सुर्ख हो जाता है। कोई ऐसी है जिसका एक ही घूंट पीनेसे अति चमत्कार-पूर्ण लाभ होता है और शरीरके सभी अंग खूब पुष्ट हो जाते हैं। कोई कोई दवाइयाँ ऐसी हैं जो इस देशमें तथा परदेशोंमें भी गाँव गाँव तथा नगर नगरमें कोने कोनेसे रोगरूपी शत्रुओंको खींचखींच कर उन्हें तोपके गोलोंसे उडाकर दशों दिशाओंमें अपनी विजयका झंडा इस प्रकार फहराने लगी हैं कि रोगोंको संसारमें टिकनेके लिए कोई जगह ही नहीं सूझती। और भी, बहुतसी दवाइयोंके विषयमें यह कहा जाता है कि वे हिमालय या सुमेरुपर्वतकी गुफाओंमें रहनेवाले कोई एक हजार या एक लाख वर्षकी आयु तक पहुँचे हुए किसी वृद्ध योगिराजने संसारके कल्याणके निमित्त बताई हैं और उनसे संख्यातीत रोगियोंको लाभ पहुँच चुका है। कुछ दवाइयाँ ऐसी बताई जाती हैं जो अनेक जंगल-पहाडोंमें घूमने फिरने, अपार दुःख उठाने और अपरिमित धन खर्च करनेसे तैयार हुई है। फिर कुछ दवाइयाँ ऐसी भी है जो संसारभरमें कहीं पर भी न मिलने-वाली पुस्तकोंमेंसे देखकर तथा देश-देशान्तरोंमें घूम घूम कर दुर्लभ वन-स्पतियोंका संग्रह करके किसी अवधूत सन्यासीकी भाँति भाँतिकी सेवा द्वारा जानी गई विधिसे तैयार की गई है, और भारतके तीस करोड मनु-ष्योंपर आजमाकर देख लेनेके बाद लोगोंके लाभके लिए बिल्कुल सस्ते दामोंमें बेची जाती हैं। सारांश यह कि अनेक दवायें आविष्कृत हो चुकी हैं और उनके विज्ञापन ऐसी ओजपूर्ण और सजीव भाषामें निक-लते हैं कि उन्हें पढ़कर लोगोंको यही विश्वास हो जाता है कि उनके सेवनसे कोई न कोई लोकोत्तर लाभ प्राप्त हुए बिना न रहेगा। यदि इन

दवाओंके सम्पूर्ण विज्ञापनोंका संग्रह करके कोई व्यक्ति इस दुनियासे किसी दूसरी दुनियामें चला जाय और वहाँके लोगोंको इन विज्ञापनोंका आशय समझावे तो वे लोग यही समझेंगे कि मर्त्यलोकमें इस समय रोगोंका नाम निशान भी नहीं होगा, वहाँके तमाम मनुष्य अत्यंत हृष्ट-पुष्ट होंगे, वृद्धावस्थाका वहाँ कुछ भी दुःख न होता होगा, अकालमृत्यु किसीकी भी नहीं होती होगी, हैजा, प्लेग, आदि जनपदनाशिनी बीमारियाँ न होती होंगी, आरोग्यसबंधी नियमोंके भग करने पर भी किसीको कोई दुःख न होता होगा और रोगोंका बिल्कुल भी भय न होनेके कारण लोग इच्छानुसार भोग भोगते हुए मौज उडाते होंगे। परन्तु हम यह बात जानते है कि इतनी अधिक रामबाण दवाओंके निकलते हुए भी, महल्ले महल्ले तथा गली गलीमें डाक्टरों और वैद्योंके रोगोंको मार भगानेके लिए तैयार बैठे रहने पर भी, और लोगोंके प्रत्येक वर्ष अपनी शक्तिके अनुसार सैकडों तथा हजारों रुपया खर्च करते रहने पर भी दिन दिन रोगोंका त्रास बढता ही जाता है। रोगोंके अधिक वृद्धि पानेके कारण लोगोंके शरीर निर्बल होते जाते है, शारीरिक शक्तियाँ क्षीण होती जाती है, और देशमें निरंतर प्लेग, हैजा जैसी व्याधिओंका प्रकोप बने रहनेके कारण हजारों तथा लाखों नरनारी अकालमें ही कालके ग्रास होते जाते है। आज पुष्ट हाथ, पाँव, छाती और मुँह-वाले तथा हरिणकी नाई चंचल आँखोंवाले बालक ढूँढ़नेपर भी मुश्किलसे मिलेंगे। दृढ और बलवान् भुजदण्डवाले, चौडी छातेवाले, चलते समय पृथ्वीको दहला देनेवाले, भरे हुए मुखवाले तथा जिनकी हुंकारसे गर्भिणी स्त्रियोंके गर्भ गिर जायें, ऐसे वीरत्ववाले युवा पुरुष लाखोंमें एक भी नजर नहीं पड़ेंगे। जिनकी कमर न झुकी हो, आँख, कान तथा दाँत इत्यादि जिनके दुरुस्त हों, साठ या सत्तर वर्षकी उम्र तक पहुँच जाने पर भी जिनके बाल सफेद न पड़े हों, जिनके शरीरमें सिकुड़न न पड़ी

हो और जिन्हें चलते समय लकडी टेकनेकी आवश्यकता न पडती हो, ऐसे वृद्ध पुरुष अब कहाँ है ? नखसे शिख तक नीरोग, जो पत्थरको भी पचा सकते हों, और पच्चीस या तीस कोस जो बडी सुगमताके साथ पैदल चल सकते हों ऐसे पुरुषोंकी बात आज वृद्ध लोगोंके मुखसे सुन-नेकी कहानी मात्र हो रही है ।

डॉका पड़ने पर या महल्लेमें चोर आने पर लट्ठ लेकर सामना करने-वाले मनुष्य आज विरले ही दीख पडते है । आज कल सभीके शरीर और मन दुर्बल हो गये हैं। जिन रोगोंका कभी नाम न सुना था, और न जिन्हें किसीने कभी देखा था, ऐसे ऐसे नये नये अनेक अभूतपूर्व रोग फूट-फूट कर देशमें प्रजाजनोंके घर उजाड रहे हैं। लोगोंकी आरोग्यवृद्धिके लिए सरकारकी कृपासे देशमें जगह जगह अस्पताल खुल गये है, चिकित्सानिपुण डाक्टरोंकी संख्या प्रति-वर्ष बढती ही जाती है, म्यूनिसिपालिटियाँ आरोग्यप्रदान करनेवाले तथा रोगोंका फैलना रोकनेवाले विविध प्रकारके उपाय किया करती हैं, नई नई दवाइयाँ नित्य प्रति ढूँढकर निकाली जा रही है और नई नई पेटेंट दवाइयोंका टिड्डीदल दिग्विदिग्व्यापी होता जाता है, फिर भी प्रजाजनोंका आरोग्य बढनेके बदले उल्टा घटता ही चला जाता है ।

ऐसी स्थिति क्यों है ? इतने अधिक उपायों और प्रतिकारोंके होते हुए भी रोगोंकी सख्या क्यों बढती जाती है ? मनुष्योंकी अधिकांश संख्या किसलिए निरोग नहीं रहती ? अथवा बीमार होनेपर दवा खानेसे अच्छी तरह निरोग होनेके पीछे कुछ महीने बाद फिर दुसराकर पहि-लेसे भी अधिक बीमार क्यों पडती है ?

दो दो बेर, तीन तीन बेर और कभी कभी चार चार बेर भी लोग भोजन करते है, तीज-त्योहारके अवसरोंपर, अथवा दावतोंमें पहुँचकर घी-मीठेसे बने हुए तर माल उड़ाते है, जाडोंके दिनोंमें मेथीके मूँगके

लड्डू, शालम-पाक, बदाम-पाक, सुपारी-पाक आदि पौष्टिक पदार्थ सामर्थ्यानुकूल खाते है। इतने पर भी शरीरमें खून क्यों नहीं बढता? दवाओंके खानेसे रोगोंकी जड क्यों नहीं जाती? इन बातोंपर आरोग्य चाहनेवाले प्रत्येक विचारवान् व्यक्तिको विचार करना चाहिए।

इन बातोंपर आज इस स्थलपर हमी विचार करते हों सो बात नहीं हे। बल्कि हमारी अपेक्षा जो देश आजकल कई प्रकारसे गुणोंमें बढे चढे हैं, जिन देशोंके निवासी हमारी अपेक्षा शरीरबल, मनोबल, विद्याबल, धनबल, तथा बुद्धिबलमें कहीं श्रेष्ठ है, ऐसे इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस आदि यूरोपीय देशोंमें तथा उन्नतिके शिखरपर पहुँचे हुए अमेरिका प्रदेशमें भी उपर्युक्त बातोंपर विचार हो रहे है। इन देशोंकी प्रजा भी धीरे धीरे शारीरिक बलमे हीन होती चली जा रही है। रोगोंकी दिनोंदिन वृद्धि हो रही है। क्षयरोगसे होनेवाली मृत्युसंख्याका नम्बर बढा हुआ हे। विस्फोट और गठिया भी अनेक लोगोंको होने लगा है और उन्माद तथा पागलपनका परिमाण इतना अधिक बढ़ गया है कि प्रजाजनोंकी आरोग्यरक्षाका प्रबंध करनेवाले अधिकारीगण गहरी चितामें पडे हुए है। आश्चर्य इस बातका हे कि इन देशोंमें एकसे एक बढकर धुरंधर डाक्टर, आरोग्यरक्षाकी मुख्य मुख्य संस्थायें और भाँति भाँतिकी दवाइयोंके आविष्कार प्रतिदिन होते रहते है, परन्तु फिर भी लोगोंका स्वास्थ्य जैसा रहना चाहिए वैसा नहीं रहता। आरोग्य नष्ट होने और अभूतपूर्व रोगोंके भयकर प्रकोप हो चलनेके कारणोंकी जाँच करके विचारवान् और विद्वान् डाक्टरोंने यही निष्कर्ष निकाला है कि आजकल जितनी दवाइयाँ चली है उनको खाकर जितने व्यक्ति अच्छे होते है उनसे दुगने या तिगुने अथवा उससे भी अधिक व्यक्ति मृत्युको प्राप्त हो जाते है। आजकलकी चली हुई जहरीली दवाइयोंसे रोग उससमय तो दब जाता है, परन्तु उनके खानेसे शरीरकी शक्ति बहुत कुछ

नष्ट हो जाती है जिससे कि शरीरमें नये नये रोग घर कर लेते हैं। संसारमें आजतक जितनी भी मुख्य मुख्य लड़ाइयाँ हुई है उन सबमें जितने मनुष्य मारे गये हैं उनसे कहीं अधिक व्यक्ति इन नई दवाइयोंके कारण मरे है। इसलिए उचित यही है कि जब कोई रोग आकर गला दवा ले तब उस रोगकी दवा करनेके बदले उन कारणोंको दूर करना चाहिए जिनसे वह उत्पन्न हुआ हो, और ऐसा कोई कुदरती उपाय करना चाहिए जिससे किसी प्रकारकी हानि न पहुँचे। रोगोंके मूल कारणको नष्ट न करके रोगोंको दबा देनेके लिये ओषधि देनेकी आज-कलकी प्रणाली कुछ इस तरहकी है, जैसे किसी स्थानमें बडी बुरी दुर्गंधि आती हो और वहाँ दुर्गंधि पैदा करनेवाले कारणोंको दूर न करके उस दुर्गंधिको दवानेके लिये लोभान और अगर आदिकी खुशबूदार धूप दी जाय। इसमें सदेह नहीं कि लोभान और अगर आदिकी धूपसे थोडे समयके लिये दुर्गंधि दब सकती है, परंतु उस दुर्गंधिका मूल कारण दूर नहीं होता, और लोभान तथा अगरकी धूप न रहनेपर दु-र्गंधि फिर जोरके साथ उठने लगती है। बुखार आनेपर 'फेनासिटीन' अथवा 'एंटीपायरीन' नामक दवाओंके खानेसे बुखार तुरत उतर जाता है, पर आप क्या यह समझते है कि वह बुखार बिल्कुल चला गया? नहीं, वह केवल उसी समयके लिये दब गया। जिस कारणसे वह बुखार आया था वह कारण अभीतक बना हुआ है, उसका नाश नहीं हुआ। इसलिए शरीरकी पीडा भी विल्कुल नष्ट नहीं हुई। समय पर फिर उठ आवेगी। ऐसी दशामें रोगोंको केवल थोडे समयके लिये दबा देनेकी अपेक्षा उनका मूल कारण नष्ट करना कहीं श्रेष्ठ है।

जब यह बात स्थिर हुई कि रोगोंका मूल कारण ही नष्ट करना उचित है, तब सुविज्ञ पुरुषोंने इस बातपर विचार आरंभ किया कि रोगोंके मूल कारण क्या हैं? इस प्रश्नका समाधान करनेमें उन्हें यह

मालूम हुआ कि अधिकाश लोग इन्द्रियोंके वशमें होकर स्वास्थ्यसबंधी अनेक प्राकृतिक नियमोंका उल्लघन कर जाते है । जो पदार्थ खाने चाहिए और जिस रीतिसे खाने चाहिए उन्हें उस रीतिसे न खाकर लोग अपनी जीभके स्वादके निमित्त खाने और न खानेके अनेक पदार्थ खाने लग गये है । एंजिनमें या तो कोयला जलाया जा सकता है और या लकडी । परंतु इनके साथ ही साथ यदि कूडा, करकट, धूल, मिट्टी, पत्थर, कंकड आदि अलाय बलाय भी एंजिनमें झोंक दी जायगी, तो उससे व्यर्थका तो धुआँ निकलेगा और काम भी ठीक ठीक न होगा । मनुष्यके शरीरके भीतर पेट भी एक एजिन है । इस एजिनमें सुगमताके साथ पच सकनेवाला और शरीरको बल देनेवाला सादा भोजन न पहुँचाकर जो मिले सो भला बुरा चाटदार भोजन डालनेसे होता यह है कि पेटकी क्रिया बिगड जाती है और शरीरको विविध प्रकारके रोग आकर घेर लेते है ।

दूसरा निश्चय इन विज्ञ पुरुषोंने यह किया है कि रोगोंका शरीरमें प्रकट होना कुछ प्राकृतिक नियम नहीं है । बल्कि आरोग्य-सम्बधी नियमोंका पालन न करनेके कारण शरीरमें जो जहर संचित हो जाता है उस जहरको बाहर निकालनेका प्रयत्न जब प्रकृति करती है तभी शरीरमें रोग प्रकट होते है । अतएव रोग अहित करनेवाला शत्रु नहीं है, बल्कि हित करनेवाला मित्र है । इसलिए रोगोंको दवा देनेके लिये दवा खानेका प्रयत्न ऐसा है जैसे शरीरके भीतरसे निकलनेवाले जहरको रोककर शरीरहीमें जमा रखना । घरमें यदि फन फैलाए हुए भयंकर सॉप बैठा हो तो बुद्धिमानी यही है कि उस सॉपको पकडकर घरसे बाहर निकालकर कहीं छोड दिया जाय । सॉंपको बाहर न निकालकर उसके ऊपर ढला ढक देनेसे अथवा उसके बिलको मिट्टी आदिसे बंद कर देनेसे सर्पका भय बिल्कुल नहीं मिट सकता । सॉप जब घरहीमें

है तो वह किसी न किसी दूसरे रास्तेसे बाहर निकल सकता है और प्राणोंका भय उपस्थित कर सकता है । इसी प्रकार आजकल जितनी दवाइयाँ चल पडी है वे शरीरके अन्दर रोगरूपी सॉपको केवल दाब देने मात्रका ही काम करती है। सॉपको घरमेंसे बिलकुल निकाल देनेकी उनमें शक्ति नहीं है । इसलिए इन दवाइयोंका खाना रोग मेटनेका उत्तम उपाय नहीं है । उत्तम उपाय तो यह है कि कोई ऐसी दवा खाई जाय जो प्रकृतिको शरीरके भीतरसे जहर निकालनेके काममें सहायता पहुँचावे ।

शरीरके भीतर जो मैल या जहर सञ्चित हो जाता है उसे प्रकृति चार मुख्य रास्तोंसे शरीरके बाहर निकल देती है । पहला रास्ता है फेंफडे । इस रास्तेसे खून आदिके साथ मिला हुआ मैल ‘ कार्बोनिक गैस ’ अथवा भाफ आदिके रूपमें बाहर निकल जाता है । दूसरा रास्ता है खाल । खालके छोटे छोटे छिद्रोंमेंसे होकर शरीरके भीतरसे जो पसीना निकलता है वह भी एक प्रकारसे शरीरके भीतर संचित हुए मैलकी सफाई है । तीसरा रास्ता है गुदा, जिसके द्वारा पाखानेके स्वरूपमें शरीरके भीतरका मलिन पदार्थ बाहर होजाता है । चौथा रास्ता मूत्रेन्द्रिय है, जो कि मूत्रके रूपमें शरीरके भीतर संचित हुए मैलको बाहर निकालती रहती है । अतएव जब कभी शरीरमें अधिक मैल सञ्चित हो जाय और प्रकृति इन चारों रास्तोंसे उस मैलको बाहर निकालनेकी चेष्टा करे, तो कुछ ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे कि प्रकृतिको इस मल निकालनेके काममें सहायता पहुँचे । यही रोगोंके दूर करनेका असली उपाय भी है । किंतु शरीरके भीतरका मैल निकालनेमें जो ओषधियाँ सहायता पहुँचानेके साथ साथ शरीरकी शक्तिको भी कम करती हों, वे दवाइयाँ निकम्मी है । उन दवाइयोंकी चेष्टा तो प्रकृतिके बिल्कुल विरुद्ध जाकर पडती है । उदाहरणके लिए जमालगोटा खानेसे अथवा एरण्डका तेल

पीनेसे दस्त बहुत आजायेंगे और पेटका मल निकल जायगा सही; परन्तु बादको शरीर शिथिल बहुत अधिक हो जायगा । इसलिए यह उपाय मलको बाहर निकालनेवाला होने पर भी प्रकृति-विरुद्ध है। इसी तरह 'डायाफोरेटिक मिक्श्चर' पीनेसे शरीरमें पसीना आकर देहके भीतरकी गंदगी निकल जरूर जाती है, मगर इस 'मिक्श्चर' में कुछ ऐसे विषैले पदार्थोंका मेल रहता है कि जिनसे हृदयकी गति मंद पड जाती है । इस लिए पसीना निकलनेके कारण होनेवाले लाभोंके बदले हृदयकी क्रिया मंद पड जानेसे और कई तरहकी हानियाँ हो जाती है । मूत्रको अधिक लानेवाली ओपधियोंके सेवनसे भी मूत्र बहुत आता है, परतु हानिकारक परिणामके साथ । प्राकृतिक अर्थात् कुदरती नियमोंके विरुद्ध शरीरके अवयवोंको जो कार्य करना पडता है उसके करनेसे उनपर जोर बहुत पड़ता है और इसी लिए उनका स्वाभाविक बल क्षीण हो जाता है। इसलिए फेफडों, त्वचा, गुदा और मूत्रेन्द्रियकी क्रियाको खूब तेज करनेके लिए उन्होंने कई निर्दोष उपाय ढूँढ़ निकाले हैं और वे उपाय इतने सरल है, उनके द्वारा रोग इतनी जल्दी मिट जाते है, रोगहीन मनुष्यके समय समय पर इन उपायोंको काममें लाते रहने पर ऐसा उत्तम स्वास्थ्य कायम रहता है, दवाओंका रगढ़ा गलेमें डालनेसे होनेवाली हानियाँ इन उपायोंके अवलम्बनसे इतनी न्यूनताके साथ होती है तथा डाक्टरोंकी बढी चढी फीसों और दवाइयोंके ढेरके ढेर दामोंकी ऐसी किफायत होती है कि आज सारे यूरोपीय देशोंमें, खास कर जर्मनी, इंग्लैंड तथा फ्रांस जैसे अग्रगण्य देशोंमें और अमेरिकाकी बडी बडी अस्पतालों और 'स्वास्थ्य-सरक्षक-स्थानों' (Saintariums) में भी इस समय इन्हीं उपायोंसे काम लिया जा रहा है । अमेरिकाके ख्यातनामा डाक्टर केलोग, डाक्टर होलब्रुक, डाक्टर ट्राल, प्रोफेसर पार्कर, प्रोफेसर कार्सन, प्रोफेसर क्लार्क आदि अनेक वैद्यविद्याधुरधर सज्जन,

जर्मनीके डाक्टर लुई कुहने, फादर नीग आदि चिकित्साशास्त्री और इंग्लैंडके डाक्टर निकोल्स, डाक्टर वेकर, डाक्टर वेईली, सर जान फार्वस, आदि विद्वान् भी इन्हीं उपायोंसे अपने रोगियोंके रोग दूर किया करते हैं ।

ऊपर कहे हुए जिन सरल, निर्दोष और वे-कौडी-पैसेके उपायोंसे यूरोप और अमेरिकाके डाक्टर लोग अपने अपने देशके रोगियोंको चंगा करते हैं वे उपाय पहले अपने भारतवर्षमें भी चलते थे और आज भी कहीं कहीं लोग उन उपायोंको काममें लाते है । इसलिए यह कभी न समझना चाहिए कि ये उपाय विलकुल नये हैं, अथवा भारत-वासियोंके द्वारा कभी काममें नहीं लाये गये है । वात यह है कि आज कल अँगरेजी दवाओंकी मायामें लोग ऐसे वेतरह फँस गये है कि वे अधिकतर इन उपायोंको उपयोगमें लाते ही नहीं । स्वय यूरोपीय देशोंके डाक्टर ही इस वातको अपने मुँहसे कुबूल कर चुके है कि अँगरेजी दवाओंमेंसे कितनी ही ऐसी है जिनके साथ विषका मेल रहता है और इसलिए वे शरीरको हानि पहुँचानेवाली हैं । इधर अँगरेजी दवाइयोंका तो यह हाल है, अव इधर अपने देशकी वनी हुई देशी ओषधियोंको देखिए तो वहुधा ऐसी ही मिलेंगी जो केवल पैसा कमा-नेके उद्देश्यसे मूर्ख वैद्योंके द्वारा तैयार होती है । अतएव सबसे घर बैठे हो सकनेवाले इन निर्दोष उपायोंका हमारे भाइयोंका यथाविधि ज्ञान हो जाय, और उनके द्वारा वे अपने सामनेके रोगोंको मेटें, भवि-ष्यत्में आनेवाले रोगोंको रोकें, और रोगहीन व्यक्ति अपने स्वास्थ्यकी दिन दूनी तरक्की कर सकें, इस उद्देश्यसे पाश्चात्य विद्वानोंके द्वारा खूब जाँच पडतालके अनतर निश्चित किये हुए रोगोंके कारणों तथा उनके दूर करनेके उपायोंका दिग्दर्शन करानेके लिए यह छोटीसी पुस्तक लिखी जाती है । इसके लिखनेका यह अभिप्राय कदापि नहीं

है कि बस डाक्टरों और वैद्योंकी अब कुछ जरूरत ही नहीं है, अथवा किसीको भी दवा खानेकी आवश्यकता ही नहीं है। कुशल डाक्टर और निपुण वैद्योंका सर्वत्र आदर और प्रतिष्ठा होनी चाहिए। वैद्य और डाक्टर यदि अपने कर्तव्य और धर्मका ठीक ठीक पालन करें, तो प्रजाका रोगोंके द्वारा नष्ट होना बहुत कुछ घट जाय। वैद्यों और डाक्टरोंके द्वारा प्रजाको आरोग्यसम्बंधी नियमोंका ज्ञान मिलना चाहिए और यह बात मालूम होनी चाहिए कि किस अवसरपर कौनसा उपाय रोगीके लिए लाभ पहुँचावेगा। इसी प्रकार विषविहीन अनेक निर्दोष दवाइयाँ भी संसारमें है, और वे रोगोंको दूर भी करती है। इसलिए संसारमें उन दवाओंका उपयोग भी होता ही है। कहनेका तात्पर्य यह कि डाक्टरों, वैद्यों और दवाइयोंकी सर्वथा निन्दा करके उनका महत्त्व और उपयोग नष्ट कर देनेके लिए यह प्रयत्न नहीं किया जा रहा है। बल्कि जो प्रजाजन अनाडी वैद्यों और डाक्टरोंके पल्ले पडनेसे अपने रोगोंको समूल नष्ट न कर सके हों, जो अस्पतालोंकी अथवा बाजारोंमें विकनेवाली अनेक पेटेंट जहरीली दवाइयोंको खाकर हानि उठा चुके हों, जो रोगोंकी दवा करनेमें पैसा खर्च करते करते अकिञ्चन बन बैठे हों, जो इतने धनहीन हों कि डाक्टरोंकी भारी भारी फीसें न दे सकते हों और छह आने रोजकी दवा न ले सकते हों, जो बाल्यावस्थासे सदा निरोग रहते हुए भी अब इस समय अज्ञानवश ऐसे प्रकारसे रहते हों, कि उन्हें सालभर बाद या छ. महीने बाद दो एक महीनेको खाटका सेवन करना पडता हो और वे अपनी इस शोचनीय अवस्थाका कारण अपने मिथ्या आहार-विहारको नहीं बल्कि ग्रहोंको या भाग्यको माने बैठे हों, जो निरोग रहना और पूर्ण आरोग्यलाभ करना चाहते हों, जो अपने । ।। अपने कुटुम्बियोंके रोग बिना दूसरोंकी सहायताके आप ही आप मेटन। चाहते हों और जो कम परिश्रम और कम खर्चके साथ सहज

उपायोंसे इस विपदासे छूटनेकी इच्छा रखते हों उन सबके निमित्त यह क्षुद्र लेख लिखा जाता है। अमेरिका, जर्मनी और इंग्लैंड आदि देशोंके ऊपर कहे गये प्रसिद्ध प्रसिद्ध डाक्टरोंके ग्रन्थोंमेंसे रोगोंके उत्पन्न होनेके कारण, उनको दूर करनेके उपाय तथा किस प्रकारका भोजन आदि करनेसे रोगोंका उत्पन्न होना रुक सकता है, आदि बातें संक्षेपके साथ इस लेखमें लिखनेकी चेष्टा की गई है। जिन्हें अधिक जाननेकी इच्छा हो वे, उपर्युक्त डाक्टर विद्वानोंके बनाये हुए बड़े ग्रंथ देखें।

रोगोंके कारण।

अगर तुम्हारे पास घड़ी है तो तुमने यह बात देखी होगी कि जब उसमें मैल भर जाता है अथवा उसके चक्रों तथा दूसरे अवयवों पर जंग चढ़ जाती है तो फिर वह बिगड़ जाती है, ठीक ठीक वक्त नहीं बतलाती और बारंबार चलते चलते रुक जाती है। शरीररूपी घड़ीके कल-पुर्जोंकी भी यही दशा है। जब तक शरीरमें मैल नहीं भरता, तब तक पेट ठीक ठीक काम करता है, खाया हुआ अन्न अच्छी तरह पचनेसे दस्त साफ होकर आता है और खून भी सारे शरीरमें वेगके साथ दौड़कर प्रत्येक अवयवको पुष्ट और नीरोग बनाये रखता है। इसके अतिरिक्त शरीरकी त्वचा पसीना निकालनेका काम अच्छी तरह करती है, फेफड़े बहुतसी शुद्ध वायु श्वासके साथ भीतर खींचकर खूनको शुद्ध बनाये रखते हैं, मस्तिष्कके शांत रहनेसे चित्त पुलकित और प्रहृष्ट बना रहता है, आलस्य या प्रमाद पास नहीं फटकने पाता, चिड़चिड़ापन, ग्लानि, अकारण शोक तथा अन्यान्य प्रकारके मनोविकार नहीं होते तथा जन्म-मरणकी झंझटवाले संसारमें रहते हुए भी कभी यह नहीं जान पड़ता कि शरीर दुःख देनेवाला है। किन्तु जब शरीरके कल-पुर्जोंमें मैल भर जाता है तब सबसे पहली बात यह होती है कि भोज-

नमें रुचि नहीं रहती। इसके उपरात बद्धकोष्ठ होनेके कारण पेट नगारेके समान हो जाता है, खट्टी डकारें आती हैं, गलेमें और छातीमें जलन पडती हे, सारे शरीरमें ठीक ठीक खून न दौड़नेके कारण भिन्न भिन्न अवयव दुर्वल पड जाते हैं, खालपर फुडियॉ फुन्सियाँ आदि निकल आती है, श्वास पूरा नहीं लिया जाता, मस्तक तप्त रहता है, हाथ ओर पैर ठढे रहते है, जहॉ पडे कि फिर वहॉसे उठनेको मन नहीं चाहता, काम करनेके लिए चित्तमें उत्साह नहीं पैदा होता, साधारणसी बातमें भी तवीयत चिढ उठती है, विना किसी कारणके ही चित्त खिन्न रहता है, अच्छा नहीं मालूम होता, तरह तरहके मनोविकार बढते है ओर यह मालूम होने लगता है कि शरीर कैदखाना है, अथवा बलती हुई भट्टी है। शरीरके भीतर मैल यदि थोड़ा होगा तब उपर्युक्त विकार कम जोरके साथ प्रकट होंगे। इसके बाद ज्यों ज्यों मैल बढ़ता जायगा त्यों त्यों इन विकारोंका जोर भी अधिक होता जायगा।

जिस तरह घडीको गर्द-धूलवाली जगहोंमें रख देनेसे उसमें मैलभर जाता है और काममें लाते रहने पर भी धातुके स्वभावके कारण उसके पुर्जोंपर जग चढ़ जाती है, उसीतरह हमारे शरीरमें भी बाहरसे मैल भरता है और शारीरिक अवयवोंके निरन्तर घिसते रहनेसे कितना ही मैल शरीरके अन्दर स्वय उसीमेंसे उत्पन्न हुआ करता है। सुलगाई हुई लकडियॉ जेसे खूब तेज ऑच देकर पीछेसे थोडीसी राख छोड देती हैं, उसीतरह शरीर-पोषणके लिए जो पदार्थ नित्य प्रति खाये जाते है वे शरीरको यथोचित पोषण पहुँचानेके उपरात थोडासा मल बाकी छोड देते हैं। अतएव शरीरके भीतर तीन प्रकारसे मैल उत्पन्न होता है। एक तो बाहरसे जाकर गर्द खाक आदि भीतर इकट्ठी हो जाती है, दूसरे शरीरपुष्टिके लिए खाए गए भोजनमेंसे शरीरको पुष्ट करनेवाले तत्त्वोंके निकल जानेके उपरात व्यर्थका फोकस रह जाता है और तीसरे शरीरके

भीतरी अवयवोंके घिसनेसे भी मैल उत्पन्न होता रहता है। बाहरसे शरीरके भीतर मैल पहुँचनेके मुख्य दो रास्ते है—नाक और मुँह। जिस तरह ये दो द्वार शरीरमे मैल जानेके है, उसीप्रकार इन्हीं द्वारोंसे शरीरको पुष्ट करनेवाले पदार्थ भी प्रवेश करते है। परतु शरीरको पुष्ट करनेवाले पदार्थोंके साथ साथ इन दो मार्गोंसे शरीरके अंदर कहीं हानिकारक पदार्थ न पहुँच जायँ, इसलिए प्रकृतिने नाक और मुँहमें दो पहरेदार बिठा दिये है। नाकमें जो अच्छी और बुरी बास सूँघ लेनेकी शक्ति रखनेवाले ज्ञानततु है वे नाकके मार्गसे हानिकारक पदार्थोंका शरीरके भीतर पहुँचना तुरत बता देते है और मुँहके भीतर जो भला और बुरा स्वाद पहचाननेवाले ज्ञानततु है वे मुँहके मार्गसे भीतर जानेवाले हानिकारक पदार्थोंकी खबर दे देते हैं। ज्यों ही वायुमें मिला हुआ कोई हानिकारक पदार्थ श्वासके साथ नाकके भीतर जाने लगा कि नाकके ज्ञानततुओंने दुर्गंधि सूँघके तुरत तुम्हें होशियार कर दिया कि 'देखो, शरीरके भीतर हानिकारक पदार्थ प्रवेश कर रहे है, हाथसे नाक बंद कर लो अथवा पैरोंको हुकुम दो कि वे इस दुर्गंधि-दूषित स्थानसे तुम्हें शीघ्र ही किसी सुगन्धिवाले स्थानमें पहुँचावें।' इस पहरेदारकी चेतावनी पर यदि तुम ध्यान दोगे, तब तो जब जब शरीरको हानि पहुँचानेवाली दुर्गंधि शरीरमें प्रवेश करेगी तब तब वह तुम्हें सावधान कर दिया करेगा। किंतु यदि तुम उसकी सामयिक चेतावनीपर ध्यान न दोगे तो धीरे धीरे वह अपना काम करना इस तरह छोड देगा जैसे बड़ी सावधानीके साथ काम करनेवाला पहरेदार अपने मेहनतसे किए गए कामकी कदर न होती देख मदोत्साह होकर ढीला पड़ जाता है। संडास साफ करनेवाले भगियोंकी, झाड़ू देनेवालोंकी, हुलास सूँघनेवालोंकी, तमाखू खानेवालोंकी, गंदी गलियोंमें नित्य रहनेवालोंकी,

हवाका जहाँ विल्कुल आना जाना न होता हो ऐसी जगहोंमें रहनेवालोंकी, भारी भीडवाली जगहोंकी जहरीली हवामें नित्य श्वास, लेनेवाले पुरुषोंकी, जैसे कि नाटक-तमाशोंमें जानेवालोंकी, कचहरियोंमें बैठनेवालोंकी, स्कूलके मास्तरों और विद्यार्थियोंकी, मंदिरों और सभाओंमें एकत्र होनेवालोंकी, तथा ऐसे ही अन्यान्य दूसरे व्यक्तियोंकी भी नाकके पहरेदार काम करनेमें मंद पढ़ जाते हैं। क्यों कि पहले जब वे खूब चुस्तीके साथ कार्य करके शरीरके भीतर प्रवेश करनेवाली दूषित वायुकी तुरंत खबर दिया करते थे तब उनकी इस सेवाकी पूरी पूरी कदर नहीं की गई। अतएव अब वे उतनी तेजीके साथ कार्य नहीं करते। इसलिए यद्यपि उपर्युक्त व्यक्तियोंकी नाकमें अब भी दूषित वायु बराबर प्रवेश करती है, तथापि उन्हें मालूम ही नहीं होता। रास्तेमें कहीं भंगीकी गाढ़ी जाती हुई मिल जाय तो हम दुर्गंधिसे कैसे व्याकुल हो उठते हैं, तथा किस प्रकार नाक-मुँह दाबकर उस जगहसे हट जानेके लिए लपकते हैं। परंतु उस गाढ़ीको हाँकनेवाला जो भंगी होता है वह बडी मौजसे धीरे धीरे गाढ़ी हाँकता चला जाता है। इसका कारण यह है कि उसकी नाकका पहरेदार विलकुल निकम्मा होगया है। अगर तुम हुलास नहीं सूँघते हो या तम्बाकू नहीं पीते हो, तो हुलासकी धाँस चढ़ जानेसे तुम्हें छींके आने लगेंगी और आँखोंमें पानी भर आवेगा। इसी तरह तम्बाकूकी गंध सूँघकर भी तुम्हारा माथा घूम जायगा और नाक दबाकर तुम उस जगहसे हट जानेकी चेष्टा करोगे। परंतु जो हुलास सूँघनेवाले हैं वे भर भर चुटकी हुलास नाकके सूराखों द्वारा भीतरको खींच कर ऐसे प्रसन्न होते हैं जैसे होलीके अवसर पर भर भर मुट्ठी अबीर-गुलाल उडाकर लोग सुखी होते हैं। इसी तरह तम्बाकू पीनेवाले व्यक्ति भी बीड़ीपर बीडी अथवा चिलमपर चिलम उड़ाकर

उस महा हानिकारक गुणसे इतने प्रसन्न होते हैं जैसे कोई व्यक्ति इत्रकी सुगन्धिसे महकते हुए स्थानमें जाकर। इसका कारण यह है कि उनकी नाकके पहरेदार बराबर नाकदरीका बर्ताव पानेसे आलसी हो गये हैं। रात्रिको बन्द मकानमें सोनेवाला व्यक्ति यदि एक दिन सब तरफसे मकानके खिड़की-दरवाजे बन्द करके और कपड़ेसे सिर ढकके सो जाय तो उसे ऐसा मालूम होगा मानो उसका दम घुटा जा रहा हो। जब तक वह अपना सिर उघाड़ न लेगा और मकानके खिड़की-दरवाजे खोल न देगा तब तक उसे चैन ही नहीं पड़ेगा। मकानके खिड़की-दरवाजे बंद करके और कपड़ेमें चारों तरफसे मुँहको लपेटकर सोनेसे मकानकी तथा कपड़ेके भीतरकी हवा बाहर नहीं निकलने पाती और बाहरकी स्वच्छ निर्मल हवा भीतर नहीं आने पाती। इस लिए सिर ढककर सोनेवाले बारम्बार उसी हवाको श्वासके साथ भीतर खींचते और निकालते हैं। शरीरके भीतरसे जो हवा श्वासके साथ एक बार बाहर आगई वह साफ नहीं है, बल्कि उसमें दूषित विष मिला हुआ है। इसलिए उसी हवाको जब हम श्वासके साथ फिर भीतर खींच ले जायँगे तो जहर हमारे शरीरके भीतर प्रवेश करके हमारे स्वास्थ्य और शारीरिक बलको इस तरहपर हानि पहुँचावेगा कि हम जान भी न सकेंगे। यह दूषित वायु जो बारम्बार हमारी नाकमें प्रविष्ट होती और बाहर आती है, तथा हमें नागवार बिल्कुल नहीं होती, इसका भी कारण यही है कि हमारी नाकके पहरेदार कुम्भकर्णकीसी गहरी और गंभीर निद्रामें पड़े सो रहे हैं।

इसी रीतिपर शरीर-पुष्टिके लिए जो पदार्थ जरा भी उपयोगी नहीं है, बल्कि जो शरीरके होनेवाले पोषणमें बाधा डालकर भिन्न भिन्न रोग उत्पन्न करते हैं, वे जब मुँहके रास्ते शरीरके भीतर जाने लगते हैं तो जीभके ऊपर बैठे हुए पहरेदार तुरत हमें सावधान कर देते हैं, और अच्छी तरह हमें यह बात जता देते हैं कि वह पदार्थ पेटके भीतर मत

ले जाओ। इन पहरेदारोंकी चेतावनी पर ध्यान देकर यदि वह पदार्थ पेटमें पहुँचनेसे रोक दिया जाता है तब तो शरीरका स्वास्थ्य ठीक बना रहता है और ये पहरेदार प्रत्येक अवसर पर हानि पहुँचानेवाले पदार्थोंके मुखमार्गसे शरीरमें प्रवेश करते समय हमें अच्छी तरह सावधान करते रहते है। परंतु जब अज्ञान, मूर्खता या अन्य किसी कारणसे शरीरको हानि पहुँचानेवाले शत्रु-पदार्थोंको मित्र पदार्थ समझ कर जिह्वाके पहरेदारोंकी दी हुई चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया जाता है, तो परिणाम फिर यह होता है कि नाकके पहरेदारोंकी नांई ये मुखके पहरेदार भी ऊँघने लगते है। फिर तो यों समझो कि यह पहरेदार बुरे पदार्थ-रूपी शत्रुओंकी सेनाकी सेनाको मुखमार्गसे भीतर शरीरमें चला जाने देते है और चूँ तक नहीं करते। कभी तुमने दो तीन वर्षके एक छोटे बालकको मिर्च मिली हुई दाल या तरकारी खिलाई है? यदि खिलाई होगी तो तुमने देखा होगा कि मिर्च-मिली तरकारी या दालके मुँहमें पहुँचते ही बालक रोने चिल्लाने लगता है, और जब तक पानीसे उसकी जीभ परकी मिर्च बिल्कुल धोकर साफ न कर दी जाय तब तक वह बराबर 'सी-सी' करता और मुँह पीटता रहता है। बात यह है कि बालककी जीभ-पर बैठे हुए पहरेदार उसे बतला देते हैं कि मिर्च बडी तेज चीज है। इसके खानेसे दाह उत्पन्न होता है और पेटमें जाकर वह पेटकी कोमल खाल पर सूजन और घाव कर देती है, इस लिए उसे मुँहमें नहीं जाने देना चाहिए। जब तक बालक छोटा रहता है तब तक तो वह जिह्वाके इन पहरेदारोंकी बातपर ध्यान देता है, किंतु ज्यों ज्यों मातापिता उसे समझाते है कि यह तरकारी कैसी स्वादिष्ट बनी है, यह दाल, यह भाजी, यह चटनी, यह कढी तथा यह पापड मिर्च डालनेसे कैसा मजेदार बना है, त्यों त्यों मिर्च पर उसकी रुचि बढती जाती है। यद्यपि मिर्चकी तेजीसे बालकका मुँह बलने लगता है तथापि धीरे धीरे मिर्च-मिले पदार्थोंके

खानेका अभ्यास उसे इतना अधिक बढ़ जाता है कि चरपराहटके कारण चाहे उसका सिर घूम जाय, शरीरमें पसीना आने लगे, छातीमें मिर्चेकी गर्मीसे चाहे आग बलने लगे और दस्त आते समय मलस्थानमें चाहे दाह हो, तब भी मिर्च-मिले चटपटे पदार्थोंको वह नित्य नए नए चावसे खाता है। दैवयोगसे दाल तरकारीमें किसी समय मिर्च यदि कम हो जाय तो बड़े आग्रहके साथ माँगकर वह ऊपरसे मिला लेता है। फिर तो उसे मिर्चोंनी दाल तरकारीसे इतना अनुराग बढ़ जाता है कि उसके बिना उसे अच्छेसे अच्छा भोजन स्वादहीन मालूम होता है।

क्या कारण है जो बालक आरम्भमें मिर्चोंसे इतनी अधिक घृणा करता हुआ भी अंतमें इतना अधिक मिर्च मसालेका शौकीन हो जाता है? यही कि उसके मुखके पहरेदार अब पहिलेकीसी सावधानीके साथ पहरेदारीका काम नहीं करते। अफीम जहरकी नाई कडवी होने पर, तम्बाकू उल्टी करा देनेवाला पदार्थ होने पर और शराब मुँह और छातीमें दाह उत्पन्न करनेवाली और बिल्कुल स्वादहीन होने पर भी जो अफीमचियों, तम्बाकूखोरों और शराबियोंको प्रिय है उसका कारण भी यही है कि उनके मुँहके पहरेदार बेकदरीमें पडनेके कारण अपना अपना काम चौकसीके साथ पूरा करना छोड बैठे है।

नाक और मुँहके मार्गसे शरीरको हानि पहुँचानेवाला मेल भीतर न जाय, इसी लिए प्रकृतिने हमें गंध और स्वाद पहिचाननेवाले ज्ञान-तंतु नाक और मुँहमें दिये है। किंतु हम अपनी ही अज्ञानता तथा मूर्खतासे इन ज्ञान-तंतुओंका पूरापूरा उपयोग न करके शरीरके भीतर बहुतसा मेल प्रवेश होने देते है और उसके परिणाममें नानाप्रकारके रोगोंसे पीडित होते है। सब कोई यह जानते है कि बागों, खेतों और मेदानों-की स्वच्छ हवाके लगनेसे दिमाग, मन और शरीरको घना लाभ पहुँचता है, किंतु फिर भी ऐसे बहुत ही कम व्यक्ति मिलेंगे जो नित्य

प्रति थोडे समयके लिए खुली जगहमें जाकर स्वच्छ वायुका सेवन करते हों। खूनके विगड जाने पर अथवा शरीरकी कमजोरी होने पर खून शुद्ध करनेवाली दवा 'सार्सापारिला' अथवा शक्ति वढानेवाली दवा 'काड लिवर आयल' मॅगाकर दो रुपये खर्च करनेका भार तो लोग स्वीकार कर लेंगे, लेकिन इनसे सोगुणा अधिक लाभ पहुँचानेवाली जो स्वच्छ वायु है, जो कि फेफडोंमें पहुँचकर तत्काल फायदा पहुँचाती और चित्त प्रफुल्लित करती है, उसके सेवनके लिए यदि कोई खुले मैदानमें जानेको कहे तो वे वीस वहाने निकाल कर कह देते है कि हमें फुरसत ही नहीं। जिस वायुके पॉच मिनिट भी न मिलनेसे हमारा श्वास घुटकर प्राणात हो सकता है उसी आयु और वलको वढानेवाली वायुके सेवनके विषयमें मनुष्य जव इतने अधिक उदासीन रहते ओर चोवीसो घटे गंदी हवामें घूमते फिरते है, तव यदि वे अल्पायु और रोगी हों तो आश्चर्य ही क्या है? गर्मियोंमे गरम लू, जाडोंमें ठंडी हवा और वरसातमें मर्तूव हवाके डरसे जो लोग घरके खिडकी-दरवाजे वद करके और कभी कभी ऊपरसे और पर्दे लटका-कर पर्दानशीन औरतोंकी तरह दवक कर रहते है, वे यदि अवला स्त्रियोंकी भॉति अवल वनेहुए घूमें तो इसमें आश्चर्य किस वातका? आकाशकी स्वच्छ हवामें उडनेवाले पक्षियो और जंगलके खुले मैदानोंमे घूमनेवाले जंगली पशुओंके आरोग्य, वल, चाञ्चल्य और जीवनशक्तिको सदेव अपनी ऑखो प्रत्यक्ष देखनेवाला और अपनेको वुद्धिजीवी समझनेवाला मनुष्य यदि चोवीसों घंटे गंदी हवामें रहकर अपनेको पशु-पक्षियोंकी अपेक्षा भी कमसमझ सिद्ध करे, तो यह कुछ कम खेदकी वात नहीं है।

यदि तुम्हें अपने शरीरके रक्तको अधिक समयसे चहवच्चेमें भरे हुए गदे पानीके समान मेला और दुर्गंधियुक्त वनाना हो, यदि तुम्हें दुर्वल और

रूखे चमडेवाला शरीर करना हो, यदि तुम पीले चेहरेवाले, मद पचन-शक्तिवाले, अल्प आयुवाले और धीरे धीरे विविध रोगोके निधान बननेके इच्छुक हो, यदि तुम उत्साहविहीन मनवाले और किसी विषयका पूर्ण निर्णय तत्काल न कर सकने योग्य मस्तिष्कवाले होना पसंद करते हो, यदि साल भरमें दोचार बेर वैद्य और डाक्टरोंसे अपना गृह पवित्र कराये विना तुमसे न रहा जाता हो, यदि तुम्हें तरह तरहके कडवे कसैले स्वादसे जिह्वाकी स्वाद लेनेकी शक्ति शिथिल करनी हो और शरीरको हजारों प्रकारकी जहरीली दवाइयोंका सग्रहस्थान बनाना हो, तो घरकी खिड-कियाँ और दरवाजे बंद करके सोया करो, हर समय घरमें ही बैठे रह-कर मकानकी बँधी हुई जहरीली वायुमें ही हर समय श्वास लिया करो, जाडोंमें रात्रिको रजाईसे मुँह नाक सब खूब बद करके लेटा करो, जहाँ हवाका आना जाना बिल्कुल न होता हो ऐसी नाटक-शालाओंमें जाकर नित्य नए नए नाटकोंका अभिनय देखा करो और वहाँ पर सैकडों मनु-ष्योंके मुखसे निकली हुई दूषित वायुमें निरंतर कई घटों तक बैठकर श्वास लिया करो और तम्बाकू गाँजा आदि पदार्थोंके धुएँका परम सुगंधि-युक्त अगरबत्तीके धुएँके समान पान किया करो ।

प्राणियोंके श्वास-प्रश्वासके द्वारा बिगडी हुई वायुसे जिस प्रकार मनु-ष्योंका स्वास्थ्य बिगडता है, उसी प्रकार घरमें झाडने-बुहारनेसे उड़ी हुई रजके नाकमें घुस जानेसे, मार्गमें चलते हुए रास्तेकी गर्दके नाकके भीतर प्रवेश करनेसे, रसोई बनाते समय चूल्हेमें जलनेवाले लकडी-कडोंके धुएँसे तथा शुद्ध वायुके अतिरिक्त ऐसे ही अन्यान्य दूषित पदार्थोंके नाकमे होकर शरीरके भीतर पहुँचनेसे मनुष्योंका स्वास्थ्य बिगड जाता है । दम, खाँसी, क्षयरोग अथवा अन्यान्य ऐसे ही रोगवाले पुरुषोंके मार्गमे जाते हुए थूक देनेसे, और तम्बाकू आदि खाने-पीनेवाले व्यक्ति-ओंके मार्गमें थूक देनेसे भी मार्ग चलनेवाले स्वस्थ पुरुषोंके शरीरमें प्रवेश

करनेवाले जहरीले कण उत्पन्न हो जाते है। क्योंकि उपर्युक्त व्याधियों-वाले व्यक्तियोंका थूक और कफ मार्गमें पड़ा पडा सूख जाता है और सूखकर मार्गमें पडी हुई खाकमें मिल जाता है। यही खाक मार्गमें झाड़ू लगनेके समय उड-उड़कर राह चलनेवाले निरोग पुरुषोंके शरीरमें नाक और मुँहके मार्गसे घुस जाती है और भले चगे व्यक्तियोंको रोगी बना देनेका कारण होती है । कडे ओर लकड़ियोंके धुएँसे भी शरीरका खून विगड जाता है ओर तरह तरहके रोगोंके उत्पन्न होनेकी आशका हो जाती हे। इसलिए आरोग्य चाहनेवाले पुरुषोंको इस बातकी सदैव सावधानी रखनी चाहिए कि नाकमें होकर कोई भी दूषित पदार्थ शरी-रके भीतर न पहुँचने पावे।

नाकमें होकर धूल अथवा खाकके दूषित कण शरीरके भीतर न जाने पावें, इसका प्रवध प्रकृतिने स्वयं कर दिया है । मनुष्योंकी नाकमें जो वाल उग आते है वे मानों दूषित कणोंको भीतर जानेसे रोकनेवाली टट्टी है। परतु वहुतसे मनुष्य ऐसे ‘ ढेढ अकल ’ होते है कि प्रकृतिके इस सुप्रबंधमें भी हस्तक्षेप किये विना उनसे नहीं रहा जाता । वे हजामत बनवाते समय या तो नाईसे इन वालोंको कैंचीसे कटवा डालते हैं अथवा स्वय अपने ही हाथसे उन्हें चीमटीसे उखाड़ डालते है। परिणाम इसका यह होता है कि खाकके कण कुछ रुकावट न होनेके कारण नाकके छेद्रोंमें सर्राटेके साथ गुजरते हुए सीधे फेफडों तक जा पहुँचते हैं और नानाप्रकारकी हानि पहुँचाते है।

इस प्रकार अशुद्ध वायुके रूपमें, धूलके कणोंके रूपमें और लकडी कंडोंके धुएँके रूपमें शरीरके भीतर भरनेवाले मैलको रोकनेमें जो व्यक्ति सावधान रहते है, वे मानों रुपयेमें आठ आने भर रोगोंके होनेकी सम्भावनाको मेट देते है।

अब मुँहके मार्गसे शरीरके भीतर प्रवेश करनेवाली दूषित वस्तु-ओंके विषयमें विचार करना चाहिए।

मुँहके मार्गसे दो प्रकारके पदार्थ शरीरके भीतर पहुँचते है, एक तो खाये जानेवाले और दूसरे पिये जानेवाले। इन दोनों प्रकारके पदार्थोंमें-से जो पदार्थ शरीरमे पहुँचकर उसे पुष्ट करते है वे ही शरीरको उपयोगी होनेके कारण आरोग्य प्रदान करनेवाले है। जो पदार्थ शरीरके भीतर पहुँचकर उसे पुष्ट नहीं करते, वे निरे निकम्मे होनेके कारण शरीरको आरोग्य प्रदान नहीं करते। सिर्फ इतना ही नहीं, बल्कि वे आरोग्य न देकर नाना प्रकारके रोग उत्पन्न करनेका कारण होते है। खाते समय कोई भी व्यक्ति धूल या मिट्टी कभी नहीं फाँकता है, क्योंकि धूल या मिट्टी शरीरका पोषण नहीं करती, इस लिए उसकी गिनती खानेकी चीजोंमें नहीं है। यदि किसी बालकको हम मिट्टी, लीपनके पपड़े, राख अथवा कोयला खाते देखते हैं तो हम उसे उन चीजोंके खानेसे रोकते हैं। इसी लिए कि वे वस्तुएँ शरीरको जरा भी पुष्ट नही करतीं, बल्कि शरीरमें पहुँचकर कई तरहकी हानि ही पहुँचाती है। अतएव शरीरको पुष्ट न करनेवाली जितनी भी चीजें खाई जाती है—चाहे वे स्वादिष्ट भी हों—वे सबकीसब केवल वही लाभ पहुँचाती है जो मिट्टी या गर्दके खाने-से पहुँच सकता है। इसमें कुछ भी सदेह नहीं। विलायती बना हुआ ‘ विनोलियन ’ साबुन यद्यपि देखने में बड़ा सुदर होता है और उसकी सुगधि भी परम मनोहर होती है, किंतु बर्फी पेडेकी नाई वह खानेकी चीज कभी नहीं हो सकता। ‘ विनोलियन ’ साबुन पेटमें जाकर यदि पच जाय और उसका खून बन सके तो अलबत्ता वह खानेका पदार्थ हो सकता है। नहीं तो वह ऐसा ही निकम्मा है जैसी धूल या मिट्टी।

अब इस बातका विचार करना चाहिए कि हम जो पदार्थ नित्य खाते हैं उनमेंसे कितने पदार्थ ऐसे है जो शरीरको पुष्ट करते है और कितने ऐसे है जो पुष्ट नहीं करते।

सब प्रकारके अन्न, सब प्रकारके फल और सब प्रकारके मेवे शरीरको पुष्ट करते है। इस लिए ये सब खाने योग्य पदार्थोंमें गिने जाते है, और इनको खानेवाले कभी रोगी नहीं होते। परंतु तुम कहोगे कि यही पदार्थ तो सब लोग खाते है, पत्थर, ईट या कोयला कौन खाता है? दाल, भात, रोटी और शाकभाजी सभी मनुष्य खाते हैं, इस लिए किसी-को भी कभी वीमार न होना चाहिए। यह कहना विल्कुल ठीक है कि सब लोग अन्नादिक खानेके पदार्थ ही खाते है। परंतु अकेले अन्नादि खाकर बैठे रहनेसे ही लोग संतुष्ट रहते, तो इतना लिखनेकी नौवत ही नहीं आती। जंगलमें रहनेवाले पशु-पक्षी अपना अपना प्राकृतिक भोजन ही खाते है, और उस प्राकृतिक भोजनसे वे कभी वीमार नहीं पडते। उन्हें यह बतानेकी जरूरत ही नहीं कि यह चीज खाना और यह न खाना। परंतु बुद्धिवान् कहे जानेवाले मनुष्यने अपने प्राकृतिक भोजनको छोड दिया है। इस लिए पशु-पक्षियोंकी अपेक्षा वह अधिक वीमार हुआ करता है और असंख्य रोग आकर उसे दबा लेते है। इसी लिए मनुष्योंके लाभार्थ यह सब लिखनेकी आवश्यकता हुई। प्रकृतिने मनुष्योंकी जिह्वामें जो पहरेदार बैठाल रक्खे है उनकी चेतावनीकी पर्वाह न करके वे खटाई, मिर्च, हींग, हल्दी, राई आदि तरह तरहके मसाले खाने लगे है। प्रकृतिने प्रत्येक प्रकारके अन्नमें और फलमें स्वाभाविक, कोमल और सात्विक स्वाद पैदा कर रक्खा है। किंतु उससे सतुष्ट न होनेवाले मनुष्योंने प्रत्येक खानेके पदार्थका स्वाद मिर्च-मसालेके मेलसे तेज करनेकी चेष्टा की है। मनुष्य यदि अमरूद खाते है तो प्रायः उसमें काली मिर्च मिलाकर उसका स्वाद बिगाड़कर खाते है। यदि वे अनन्नास, जामुन अथवा ऑडू खाते है तब भी उनमें नमक या मिर्च मिलाये विना उन्हें स्वाद नही आता। दाल या तर-कारी खाते हैं तब भी नमक, मिर्च और तरह तरहके मसाले मिलाये विना

उन्हें भोजनका यथेष्ट आनद नहीं मिलता । इस शाकमें अजवायन पडनी चाहिए, इसमें जीरा, मेथी या राई चाहिए, तथा इसमें सज्जी आदि मसाले चाहिए। इस तरह उसने हरबातमें चतुराई खर्च करनेमें जग भी कसर नहीं रक्खी है। कद्दू वादी होता है, इसलिए उसमें मेथी विनाडाले खानेसे वादी हो जायगी। वादी हटानेके लिए सेमके वीजोंमें अजवायन और आमके रसमें सोठ चाहिए। इत्यादि पाक-विद्याके विविध प्रकारके रहस्योंको वतलाने और समझानेमें मनुष्य अपनी पाकशास्त्रकी प्रवीणताका परिचय देते है । मानों प्रकृतिने प्रत्येक पदार्थ ऐसा उत्पन्न किया है जो वादी करे, ठढ करे और अच्छी तरह न पच सके। चौरासी लाख योनियोंके प्राणी अपना अपना प्राकृतिक भोजन नित्य खाते हुए पूर्णतया निरोग ओर हृष्ट पुष्ट रहते है। वादी अथवा ठंढ क्या वला होती है यह वे जानते भी नहीं। किंतु मनुष्य अपने प्राकृतिक भोजनके खानेसे वादी ओर ठढ आदि व्याधियोंका शिकार वन जाता है। चनेका दाना खाकर घोडा तो खूब वलिष्ठ और हृष्टपुष्ट होता है, किंतु मनुष्य यदि घोडेकी तरह विना मिर्च मसाला मिलाये हुए चनेका दाना खाय तो उसका पेट फूल जाय और अजीर्ण हो आवे। है आश्चर्य या नहीं?

दाल तरकारी आदिके साथ जो नमक, मिर्च, मसाला आदि खाया जाता है वह कुछ खानेका पदार्थ नहीं है। उसमें शरीरका पोपण करनेवाले कोई भी तत्त्व नहीं है । जिस तरह मिट्टी या पत्थरके खानेसे शरीरमें एक भी बूँद खून नहीं वढता, उसी तरह मिर्च मसालेसे भी शरीरमें विल्कुल खून नहीं वढता। भूख लगने पर यदि गेहूँ वाजरा आदि खाया जाय तो भूख मिट जाय और शरीर भी पुष्ट हो । किंतु गेहूँ वाजरा आदि अन्न न खाकर भूख लगने पर पावभर मिर्चें अथवा दूसरे मसाले खा लिये जायँ तो क्या पेट भर जायगा? और क्या उस मिर्च मसालेसे शरीर पुष्ट हो सकेगा? कभी नहीं। अदरख, मिर्च, और लशुनका पावभरका

एक लड्डू बनाकर कोई सुबहको खाले तो सध्या तक निश्चित होकर नहीं रह सकता। उस लड्डूके खानेसे पेट नहीं भरेगा। किस लिए नहीं भरेगा? इसी लिए कि इन पदार्थोंमें शरीरका पोषण करनेवाले कोई भी तत्त्व नहीं है।

इसी तरह पीनेके पदार्थोंमें भी केवल पानी ही शरीरका पोषण करनेमें उपयोगी है। पानीके सिवाय चाय, कहवा, कोको, शराब आदि पदार्थोंको जो व्यक्ति शरीरपुष्ट करनेवाले पदार्थ समझ कर पीते है, वे भारी भूल करते है, और इन पदार्थोंको पीकर शरीर पुष्ट करनेवाले तत्त्वोंको शरीरके भीतर पहुँचानेके बदले उल्टा उन जहरोंको अपने पेटमें पहुँचा लेते है जो कि चाय कहवा आदि पदार्थोंके साथ मिले रहते है। यदि चाय कहवा आदि पदार्थोंमें शरीरको पुष्ट करनेवाले तत्त्व मौजूद होते, तो उनके पीनेसे उसी तरह पेट भर जाता जैसे अन्नकी बनी हुई रोटी या पूरी खानेसे, और सब मनुष्य उन्हें पीकर उसी तरह महीनोंतक रह सकते जैसे रोटी पूरी खाकर रहते है। किंतु ऐसा कहीं भी देखनेमें नहीं आता कि केवल चाय कहवा आदि पदार्थ खाकर लोग महीनोंतक रह जाते हों। कोई यदि यह कहे कि चाय कहवा आदि पदार्थोंके साथ जो दूध और शकर आदि द्रव्य मिलाये जाते है वे शरीरको पुष्ट करनेवाले हैं, तब भी चाय और कहवा आदि पीनेकी उपयोगिता सिद्ध नहीं हुई। क्योंकि आजकलकी वैज्ञानिक खोजोंके द्वारा यह बात भली भाँति सिद्ध हो चुकी है कि चाय कहवा आदि पदार्थोंमें शरीरको हानि पहुँचानेवाले विषैले तत्त्व मिले रहते है। तब भला दूध शकर आदि पोष्टिक पदार्थोंका मेल होने पर भी चाय और कहवा अपने जहरीले तत्त्वोंका असर कहीं छोड सकते है? अफीम मिले हुए दूधमें भी तो दूधका पौष्टिक गुण रहता ही है। किंतु इस विचारसे क्या कोई भी समझदार व्यक्ति अफीम-मिला दूध पीनेको तैयार होगा?

मासके विषयमें भी यही बात है। मासमें पौष्टिक तत्त्व जरूर हैं, परंतु उन पौष्टिक तत्त्वोंके साथ साथ शरीरमें रोग पैदा करनेवाले परमाणु और ' यूरिक एसिड ' नामक अत्यत हानिकारक पदार्थ भी मासमें पाया जाता है। ' यूरिक एसिड ' एक प्रकारका विषैला पदार्थ है। इस लिए इस विषैले पदार्थका मेल होनेके कारण मास आहारके योग्य पदार्थ नहीं माना जा सकता। मनुष्य जिन जीवोंको मांसाहारके लिए पालता है उनमेंसे अधिकाश जीव नानाप्रकारके रोगवाले होते है। अत एव उनके मासमें रोगोंके विकृत परमाणु होते है। चाहे जितनी देर तक आगपर धर कर यह मास रॉधा जाय, परन्तु फिर भी इन रोगके परमाणुओंका नाश नहीं होता। जिससे कि उस मांसको खाने-वाले मनुष्य भी अंतमें उन्हीं रोगोंसे पीड़ित होते है जिन रोगोंसे कि वे जीव पीडित रहते थे। यहॉ पर कोई यह तर्क कर सकता है कि जगलमें रहनेवाले जीव जन्तु तो विल्कुल निरोग और हृष्टपुष्ट होते हैं, अतएव उनका मांस खाना तो हानिकारक नहीं है। परतु यह तर्क भी विल्कुल लचर है। यह माना कि जगली जीवोंके निरोग और हृष्ट पुष्ट रहनेके कारण उनका मांस रोग पैदा करनेवाले परमाणुओंसे रहित होता है, परंतु ' यूरिक एसिड ' नामका जहरीला पदार्थ तो जंगली जीवोंके मांसमें भी होता ही है। यह भी आज कलके विविध अनुसंधानों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि यह ' यूरिक एसिड ' नामका जहरीला पदार्थ मांससे किसी प्रकार दूर नहीं किया जा सकता। इस लिए यह कभी सिद्ध नहीं हो सकता कि मास एक उपयोगी भोजन है। प्रायः देखा गया है कि मासभोजी व्यक्तियोंमें गठिया, दर्दगुर्दा, रक्तपित्त, विस्फोट, यकृतके रोग, मंदाग्नि आदि व्याधियॉ जितनी अधिकताके साथ होती है उतनी अधिकताके साथ अन्नखानेवालोंमें नहीं होतीं। यह वात आजकलकी जॉच-पडतालके द्वारा

अच्छी तरह सिद्ध हो चुकी है। 'मास शुद्ध आहार नहीं है' यह सिद्धात अहिंसा धर्मका पालन करनेवाले भारतवर्षके ऋषि मुनियोंकी कोरी कल्पना नहीं है, बल्कि ससारके भिन्न भिन्न देशोंमें प्रत्यक्ष प्रयोगोंके आधार पर निश्चित किया गया सिद्धात है। मासभोजी लोग जो वारम्बार यह तर्क किया करते हैं कि अन्न-भोजनकी अपेक्षा मास-भोजन विशेषरूपसे शरीरको बलिष्ठ और हृष्ट पुष्ट बनाता है, सो निरी कपोल-कल्पना है। हमारे देशके सिक्ख लोग मांसाहारी बिल्कुल नहीं हैं, बल्कि अन्नका आहार करनेवाले हैं। फिर भी इन्हीं सिक्खोंने मांसभोजन करनेवाले अँगरेज सैनिकोंके मुकाबिलेमें युद्ध करके आजसे बहुत पहले कैसी प्रचण्ड शूरवीरता दिखाई थी, यह बात इतिहास जाननेवालोंसे छिपी नहीं है। यूरोपमें परम शूरवीर तथा बल-वान् तुर्क लोगोंने मांसाहारी रूसी प्रजाजनोंको बड़े पराक्रमके साथ परास्त किया था, यह बात सबको मालूम है। स्काटलैंड देशके परम प्रसिद्ध लड़ाके अपनी शूरवीरता और युद्ध-निपुणताके लिए सारे संसारमें प्रख्यात है। उनका भोजन भी अन्न ही है। अति प्राचीन कालमें यूनानके स्पार्टा-नगर-निवासी योद्धा मुख्यत जौका बना हुआ भोजन खाकर रहते थे। इस जौके भोजनके प्रतापसे ही नौ हजार स्पार्टानिवासी योद्धाओंने ईरानके बादशाह जर्कसीजके नेतृत्वमें बढनेवाले करोड़ों मांसा-हारी सेनिकोंके आक्रमणको रोका था। यह बात भी इतिहासप्रसिद्ध है। दूर क्यों जाय, हम प्रत्यक्ष ही देखते है कि हाथी मांस खानेवाला जीव नहीं है। परंतु फिर भी उसका शारीरिक बल सभी पशुओंसे कितना बढ़ा चढ़ा होता है, इस बातका प्रमाण देनेकी जरूरत नहीं। ऐसी ऐसी अनेक मिसालोंसे यह सिद्ध किया जासकता है कि मांस-भोजन बलदायक और अन्नभोजन दुर्बलता देनेवाला प्रमाणित करनेकी चेष्टा करना निरा पक्षपात और बेजा तरफदारी है। आजकलके प्रयो-

गोंसे और उल्टा यह सिद्ध हो चुका है कि एक सेर गेहूँमें अथवा एक सेर अरहरकी दालमें शरीरपोषण करनेवाला जितना सत्त्व पदार्थ होता है, उतना सत्त्व पदार्थ यदि माससे प्राप्त करना हो तो एक सेर मास नहीं वल्कि तीन सेर मास लेना होगा। जब रोग और जहरके परमाणुओंसे भरे हुए तीन् सेर मासके खानेसे केवल एक सेर अन्नके आहारके वरावर ही शरीरको पोषण मिलता है और अन्नाहारकी अपेक्षा रोगोंके उत्पन्न होनेकी संभावना भी अधिक रहती है, तो वुद्धि-विवेकवाले मनुष्यको मासभोजन त्याग देना ही उचित है। जिस अन्नाहारमें रोग तथा जहरके परमाणु विल्कुल भी नहीं होते, जो केवल शुद्ध ही शुद्ध है, जिसके प्राप्त करनेमें किसी भी प्राणीकी हिंसाका घोर पाप नहीं करना पडता, जिसको देखकर विल्कुल भी घृणा अथवा रोमाञ्च नहीं होता, जो अपना प्राकृतिक भोजन है, जिसके खानेसे वल, पुष्टि, आरोग्य तथा वुद्धि वढती है, जो शरीरमें और मनमें असख्य विकारोंके पैदा करनेका कारण नहीं है, तथा जिससे उन जीवोंके शरीरका भी मास वनता है जिनका मास मासभोजी लोग बडी स्पृहासे खाते है, उस अन्नका आहार ही मनुष्योंको ग्रहण करना चाहिए। इस विपयमें इससे अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं।

जो लोग दुराग्रही अथवा हठी प्रकृतिके नहीं है तथा जो विचारवान् है, वे ऊपरके संक्षिप्त विवेचनसे ही यह वात समझ लेंगे कि नमक, मिर्च, हींग आदि मसाले चाय, कहवा, कोको आदि पीनेके पदार्थ और भांग, गाजा, तम्बाकू, अफीम, आदि व्यसनकी चीजें तथा मत्स्य आदि जीवोंका मास, ये आहारकी वस्तुएँ नहीं है। वहुतसे व्यक्ति जो अधिक परिमाणमें इन पदार्थोंको काममें लाते है सो मानों शरीरको हानि पहुँचानेवाले तत्त्वोंसे मिले हुए इन पदार्थोंको शरीरके भीतर पहुँचा कर शरीरमें मैल इकट्ठा करनेकी चेष्टा करते है।

मिर्च, मसाला और चाय, कहवा आदि पदार्थोंका उपयोग करनेवाले व्यक्ति कहेंगे कि यदि ये वस्तुएँ खानेके कामकी नहीं है, तो परमेश्वरने इन्हें उत्पन्न ही क्यों किया ? दाल, तरकारी आदि नमक मिर्च मसालेके मिलानेसे कैसी स्वादिष्ट हो जाती है ! विना नमक मिर्च मसालेके मिलाये फीका और स्वादहीन भोजन मुँहमें कैसे दिया जायगा ! इसका उत्तर यह है कि परमेश्वरने जितनी वस्तुएँ ससारमें पैदा की हैं, वे एक मात्र मनुष्यके ही खानेके लिए नहीं की है। इस दृष्टिसे यदि देखा जाय तो अफीम भी परमेश्वरने उत्पन्न की है। इस लिए अफीम भी सब मनुष्योंको खानी चाहिए। गाँजा तम्बाकू आदि नशीली चीजोंका उपयोग करनेवाले कहेंगे कि सब मनुष्योंको गाँजे और तम्बाकूका उपयोग करना चाहिए। कीड़े-मकोड़े और चूहे खानेवाले चीन देशके लोग कहेंगे कि मनुष्यमात्रको कीडे-मकोडे खाने चाहिए, नहीं तो परमेश्वरने कीडे-मकोड़े बनाये किस लिए है ? फ्रांस देशमें कुछ लोग ऐसे भी है जो मिट्टीका तेल अथवा जानवरोंका रक्त पीते है। वे भी इस वहानेसे अपनी महाघृणित आदतोंको उत्तम सिद्ध करनेकी चेष्टा करेंगे। छोटे वालक जो मिट्टी और कोयला खाते है वे यदि मना किये जाने पर या रोके जाने पर यह कहें कि परमेश्वरने जो मिट्टी और कोयला पैदा किया है उसे हम खाते हैं तो क्या बुरा करते है, तो क्या हम उनकी इस वातको मानकर उन्हें मिट्टी और कोयला खाने देंगे ? परमेश्वरने कौंच, इन्द्रायण, एलुआ, वच्छनाग, दीकामाली आदि असख्य चीजें वनाई है। भला फिर नीबूके वदले इन्द्रायणका फल दाल तरकारीमें क्यों न निचोड़ लिया जाय ? दालमें हींगका वघार देनेके वदले वच्छनाग या दीकामालीका वघार क्यों न दे दिया जाय ? रायतेमें राईकी जगह एलुआ क्यों न डाल दिया जाय ? भॉगके वदले नीमके पत्ते घोंटकर और प्याला भरकर किस लिए नहीं पी लिये जाते ?

म्वाकूके बदले कांचका व्यवहार क्यों नहीं किया जाता ? घतरेके लको कच्चे आमकी तरह काटकाट कर रोटीके साथ क्यों नहीं खाते ? रमेश्वरने तो ऐसी ऐसी हजारों और लाखों चीजें पैदा की है । उन्होंने क्या अपराध किया है जो हम उनका आदर सत्कार नहीं करते ?

मिर्च परमेश्वरने पैदा की है और इसलिए वह मनुष्यके खानेके लिए ही बनाई है, यह कोई युक्ति नहीं, केवल उपहास है। आफ्रिका प्रदेशकी मनुष्यको मारकर खाजानेवाली जगली जातिका कोई मनुष्य यदि यहाँ आकर हमारे बालकको मारकर खा जाय और इस अपराधमे पकडा जाकर वह यदि सरकारकी ओरसे दंड पावे और उस समय वह यदि यह कहे कि परमेश्वरने बालकोंको हमारे खानेके लिए ही उत्पन्न किया है, तो क्या वह दड पानेसे बच सकता है ? इसी तरह परमेश्वरने मिर्च, मसाला, चाय, कहवा, शराब, पशु, पक्षी, आदि मनुष्यके खानेके लिए ही उत्पन्न किये है, यह कह कर जो लोग उन्हें खाने पीनेके काममें लाते है वे दड पानेकी भाँति उन पदार्थोंसे होनेवाली शारीरिक हानिसे नहीं बच सकते । परमेश्वरने अमुक वस्तु बनाई है, इसलिए वह मनुष्यको खाना ही चाहिए यह कहना भारी मूर्खता है । बुद्धिमान् व्यक्ति वह गिना जायगा जो यह निश्चय करे कि जिन पदार्थोंके खानेसे शरीर पुष्ट हो, बलकी वृद्धि हो, आयुका क्षय न हो, रोग आकर न सतावें और निरन्तर आरोग्य बना रहे, वे ही पदार्थ परमेश्वरने मनुष्यके खानेके लिए बनाये हैं । मिर्च, मसाला, चाय, कहवा, मास, शराब आदि पदार्थोंके सेवनसे तत्काल हानि होती हुई हमें नहीं मालूम होती, किंतु अधिक समयतक उनका सेवन जारी रखनेसे जब उन पदार्थोंका जहर थोड़ा थोड़ा करके शरीरमें सचित हो जाता है, तब हानि अवश्य होती है, और अकालमें ही मृत्यु आकर गला पकड़ लेती है । इसीसे यह सहजरीतिसे सिद्ध है कि परमेश्वरने इन पदार्थोंको मनुष्यके खानेके लिए

नहीं बनाया है। शरीरशास्त्र-सम्बधिनी विविध प्रकारकी खोजोंसे यह बात सिद्ध हो चुकी है कि ऊपर कहे हुए पदार्थोंके खानेसे शरीरको हानि पहुँचती है। अतएव इस विषयमें और अधिक तर्क वितर्क करनेकी आवश्यक्ता नहीं जान पड़ती।

ऊपर जो पदार्थ खानेके अयोग्य बताये जा चुके हैं उनके खानेसे जैसे शरीरमें मल सञ्चित होकर रोग उत्पन्न होते हैं, उसी तरह अन्न, फल तथा मेवा आदि खाने योग्य पदार्थोंको भी आवश्यक्तासे अधिक खा लेनेसे नाना प्रकारके रोगोंकी उत्पत्ति होती है। बहुतसे लोगोंकी यह धारणा रहती है कि जितना आहार खाया जायगा उतना ही शारीरिक बल बढेगा। वास्तवमें बात यह है कि जितना अन्न खाया जाय वह सबका सब पच जाय तो निस्संदेह वह शरीरको पुष्ट और बलिष्ठ बनावेगा। किंतु भोजनके उपरांत पेट यदि नगाड़ेकी तरह तन जाय, तीन या चार घंटे बाद खट्टी खट्टी डकारें आने लगें, सन्ध्यातक अथवा दूसरे दिन सवेरे तक भी भूख न लगे, भोजनके पीछे ऑखोंमें खुमारी आजाय और सोनेको जी चाहे, अथवा शरीर इतना भारी पड़ जाय कि किसी भी कामके लिए स्फूर्ति न रहे, तो समझ लेना चाहिए कि जितना भोजन करना चाहिए था उससे अधिक भोजन कर लिया गया है। यह आवश्यकतासे अधिक खाया हुआ भोजन स्वयं भी नहीं पचता और अपने साथ साथ बाकी सारे अन्नको भी अच्छी तरह नहीं पचने देता। जिससे होता यह है कि उस भोजनका जितना खून शरीरमें बनना चाहिए उतना नहीं बनता। बहुतसे लोग भरपेट भोजन करते हुए भी पुष्ट नहीं होते। जाति-बिरादरीकी जेवनारोंमें वे चार चार छह छह लड्डू उड़ा जाते हैं और सेर सेर आध आध सेर घीका श्राद्ध कर डालते हैं। मगर फिर भी उनका शरीर खपच्चीके ठाटकी नाईं रहता है। इसका [illegible] यही है कि खाये हुए अन्नमेंसे उनके शरीरमें बहुत कम खून तैयार

होता है और जितना तैयार होता है वह भी शुद्ध तैयार नहीं होता। उनका खाया हुआ अधिकांश भोजन मलके रूपमें या तो बाहर निकल जाता है और या शरीरमें इकट्ठा होता रहता है। प्राय. बालकोंकी माताएँ अपने बच्चोंको एक या दो रोटी अथवा चमचा दो चमचा भात यह समझ कर जिद करके अधिक खिला देती हैं कि उससे शरीरमें अधिक खून बनेगा। इसका परिणाम यह होता है कि बालकोंका पेट इस अधिक खाये हुए अन्नको पचा ही नहीं सकता। इस लिए उन बालकोंका खाया हुआ भोजन आधा पचता है और आधा नहीं। अतएव उस अन्नसे बालकोंके शरीरमें जितना खून बनना चाहिए उतना नहीं बनता। जितने कोयलेकी आँच पर दो सेर पदार्थ ही अच्छी तरह राँधा जा सकता हो उस पर यदि तुम पाँच सेर राँधना चाहो तो कैसे रँधे? जो पेट केवल आध सेर अन्न पचा सकता है उसमें यदि डेढ़ सेर अन्न ठाँस दिया जाय तो भला फिर उस डेढ़ सेर बोझका ठीक ठीक पाचन होकर उत्तम खून कैसे तैयार हो? जब कभी कहीं जेवनारमें अथवा दावतमें लोग जाते हैं तब एक तो योंही वहाँ नित्यकी अपेक्षा अधिक भोजन किया जाता है, दूसरे फिर परोसनेवाले कोई इष्ट-मित्र आग्रह-पूर्वक और अधिक लड्डु या कचौरी परोस जाते हैं, और यह परोसा हुआ पदार्थ उन इष्ट-मित्रोंके अनुरोधसे खाना भी पड़ता है। इसका फल क्या होता है? यही कि जेवनारमें खाया हुआ समूचा अन्न अधूरा पचनेके कारण जहर हो जाता है। यह जहर शरीरके खूनमें मिल जाता है। जहर मिला हुआ यह खून जब मस्तिष्कमें पहुँचता है तब सिरका दर्द पैदा करता है, सारी रात सुखसे सोने नहीं देता, बुरे भले स्वप्न दिखलाता और पेटको कमजोर बनाता है। इस तरह शरीरमें जब थोड़ा थोड़ा जहर इकट्ठा होकर अधिक हो जाता है तब बुखार, हैजा, आँव, दस्त, आदि नाना प्रकारके रोगोंके रूपमें प्रकट होता है।

आवश्यकतासे अधिक खाया हुआ भोजन जैसे विष हो जाता है उसी तरह एक वेर खाये हुए अन्नके अच्छी तरह पचनेसे पहले ही बीचमें और खा लेनेसे भी पाचन ठीक ठीक नहीं होता। चूल्हे पर पतीलीमे चढी हुई दाल जब अधूरी ही पकी हो उस अवस्थामें कोई फूहड स्त्री यदि उस पतीलीमें और कच्ची दाऊ डाल दे तो वह सबकी सब दाल बिगड़ जायगी। ऐसे ही जबतक एक बार खाया हुआ अन्न अच्छी तरह नहीं पचे तबतक कोई दूसरी चीज यदि खा ली जायगी तो न तो पहली ही खाई हुई वस्तु अच्छी तरह पचेगी और न पिछली। नौ या दस वजे भोजन करके पढनेको गये हुए स्कूल या पाठशालाओंके विद्यार्थी बालक दो वजेके समय जो जीमें आता है अट्ट सट्ट मोल लेकर खा लेते है। वड़े आदमी भी संध्याके समय जब देखते है कि भोजन तैयार होनेमें अभी थोडी देर है तब बिना विचार किये ही भोजन तैयार होनेतक ऐसी वैसी चीजें खा लेते है। बहुतसे बालकोंकी माताएँ तो अपने बच्चोंको दिनभरमें पॉच पाँच और छ. छ वार अनियामितरूपसे खिलाया करती है। रातको लौट कर घर आते समय बहुतसे लोग संतति-प्रेमसे प्रेरित होकर कुछ न कुछ खानेकी वस्तु लेते आते है, और चाहे बालक उसी समय भोजनसे निवृत्त हुआ हो अथवा थोडी देरमें भोजन करनेवाला हो तो भी वे बिना संकोच वह लाई हुई चीज उसे खानेको दे देते है। मनुष्य पशुओंको घास दाना और पानी इत्यादि ठीक समय पर देते है और जानते है कि एकबार खिलाकर थोडी देर पीछे यदि उन्हें फिर दुसरा कर घास आदि खिला दी जाय तो वे बीमार हो जायॅ। इसलिए जिसके यहॉ पशु पले होते है, वह नियत समय पर ही उन्हें दाना और घास इत्यादि खानेको देता है। परतु पशुसे कहीं सैकडों गुणा बहुमूल्य जिन बालकोंका जीवन है उन्हें अनियामित रीतिपर जब चाहे तब इस तरह खिला देना मानों उनका पेट ऐसे मजबूत लोहका

बना हुआ है जो सब कुछ खट्टा सट्टा हजम करता चला जायगा, बड़े खेदका विषय है।

बहुतसे बालक भोजन कर चुकनेके घंटे दो घंटे उपरांत ही फिर खानेको माँगने लगते हैं, और उनकी माँ भी बालकको भूखा जानकर घरमें रक्खी हुई कुछ न कुछ वस्तु खानेको दे देती है। मा यह समझती है कि बालकको सचमुच ही भूख लगी है पर वास्तवमें बालक सचमुच भूखा नहीं होता। भूख लगनेपर ही बालक खानेको माँगता है यह नहीं समझना चाहिए, बल्कि बालकोंको तरह तरहके स्वादवाले पदार्थोंके खानेकी आदत जो माता-पिताके लाड-प्यारके कारण पड़ जाती है उस आदतके कारण ही तरह तरहके स्वादिष्ट पदार्थोंको खानेके लिए उनकी जीभ चटारे भरती है, और वे बार बार खानेको माँगते हैं। चटपटे मसालेवाली अथवा खट्टी मीठी चीज खानेके लिए ही वे जल्दी जल्दी खाना माँगनेकी पुकार मचाते हैं। जिस समय वे भूख भूख कहकर खानेको माँगे उस समय उन्हें रोटी पूरी खानेको दे दी जाय। यदि वे सचमुच ही भूखे होंगे तो चुप चाप वह रोटी या पूरी खा लेंगे, परंतु यदि वे रोटी पूरी न खाकर और कुछ खानेकी चीज पानेके लिए मचलें और जिद्द करें या मुँह बिगाड़ें तो निश्चय यही समझ लेना चाहिए कि वे वास्तवमें भूखे नहीं हैं, बल्कि उनकी जीभ चटारे ले रही है। केवल बालक ही नहीं बल्कि बड़े आदमी (स्त्री और पुरुष दोनों) इसी जीभके चटोरेपनके कारण एक बार खाये हुए अन्नके अच्छी तरह पचनेसे पहले ही बार बार तरह तरहकी चीजें खा लेते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उनका शरीर, मन और बुद्धि सदा मलीन और दुर्बल ही बने रहते हैं। संसारमें प्रतिवर्ष लाखों बालक पाँच वर्षकी अवस्थासे पहले ही मृत्युको प्राप्त हो जाते हैं। इसका कारण अन्यान्य बातोंके साथ मुख्य रूपसे एक यह भी है कि जीभके चटोरेपनके कारण

वे बिल्कुल बेकायदे खाया पिया करते हैं। संसारमें अनेक रोगोंके बढ़ने और असख्य लोगोंकी अकाल-मृत्यु होनेका मुख्य हेतु जीभका चटोरापन ही है। आज कल जो सौ वर्षके अथवा इससे अधिक उमरके व्यक्ति इतने कम देखनेमें आते हैं, इसका भी कारण यही है कि लोगोंमें जीभका चटोरापन बेहद बढ़ा हुआ है। जिन जिन लोगोंने लम्बी आयु भोगी है वे सब बिना मिर्च मसालेका भोजन किया करते थे; और वह भी नियत समय पर, केवल उतना जितना कि आवश्यक होता था। कंदमूलकी नाईं सामान्य और सादा भोजन दिनरातमें केवल एक ही बार करके (अथवा कभी कभी वह भी न करके) हमारे प्राचीन ऋषि महर्षिगण बड़ी लम्बी लम्बी आयु भोगते थे, और वे अद्भुत आरोग्य, शरीरबल, मनोबल, बुद्धिबल, और अध्यात्मबल प्राप्त करके जीवनका यथेष्ट आनंद पाते थे। इन सब बातोंको जानते हुए भी हमलोग वास्तवमें सुखी होनेका प्रयत्न नहीं करते। उलटा करते हैं यह कि प्रति दिन नियम और संयमको तोड़कर और इन्द्रियोंको लाड लड़ानेमें लगे रहकर अपना मनुष्य-जीवन सार्थक समझते हैं। बुद्धि रखनेवाले बुद्धिजीवी प्राणी होकर हमारे लिए यह कैसी घोर निर्लज्जताकी बात है।

अब हम साररूपसे और संक्षेपके साथ अबतक कहे हुए रोगोत्पत्तिके कारणोंका निरूपण किये देते हैं। शरीरमें जिस मैलका जाना उचित नहीं है उसी मैल अथवा जहरके शरीरके भीतर पहुँचनेके कारण रोग उत्पन्न होते हैं। नमक, मिर्च और मसालेका खाना शरीरको पुष्ट करनेके लिए जरा भी उपयोगी नहीं है। उसका खाना ऐसा ही निरर्थक और हानिकारक है जैसे गर्द मिट्टीका फाँकना। नमक मिर्च मसालेके खानेसे पेट दुर्बल हो जाता है और गंदा खून पैदा होता है। जो पदार्थ अच्छी तरह शरीरको पुष्ट करनेवाले हैं, वे भी यदि आवश्यकतासे अधिक परिमाणमें खा लिये जायँ तो जहरकी नाईं हानिकारक होते हैं। भोजन करते समय यदि एक ग्रास भी बढ़ती खा लिया जायगा तो वह

अच्छी तरह न पचकर पेटमें विष उत्पन्न करेगा और अपने साथ बाकीके भोजनको भी जहरीला बना देगा। एक बेर खाये हुए भोजनके अच्छी तरह पचनेसे पहले ही यदि थोड़ी देर बाद और भी कोई वस्तु खा ली जायगी तो वह शरीरको कभी पुष्ट न करेगी, बल्कि वह ऐसी ही निकम्मी सिद्ध होगी जैसा शरीरके भीतर गया हुआ कूड़ा करकट आदि। चाय, कहवा, तम्बाकू, शराब, मांस आदि पदार्थ भी जहरीले होनेके कारण शरीरमें पहुँचकर मैल ही बढाते है । इस लिए आरोग्य चाहने वालोंको मुखकी राहसे इन पदार्थोंको पेटमें नहीं जाने देना चाहिए। इसी तरह अशुद्ध हवा, धूलके परमाणु और लकडी कडोंके धुएँको भी नाकके रास्तेसे शरीरके भीतर प्रवेश करनेसे रोकना चाहिए। आरोग्य प्राप्त करनेके इच्छुक व्यक्तिओंको सदैव शुद्ध वायुमें श्वास लेना चाहिए। बाहरसे आनेवाली शुद्ध हवाको रोकनेके लिए घरके खिडकी दरवाजे बद नहीं करने चाहिए और सोते समय चारों ओरसे कपडेसे मुँह लपेट-लपाट कर नहीं सोना चाहिए । जिन स्थानोंमें हवा अच्छी तरह न आती जाती हो वहाँ तथा जिन स्थानोंमें अनेक लोग इकट्ठे हों ऐसी सभाओं अथवा नाटक-शालाओंमें जाना और अधिक समय तक वहाँ बैठकर सब मनुष्योंके मुँहसे निकली हुई दूषित वायुमें ही श्वास-प्रश्वास लेना महा हानिकारक है ।

शरीरमें मैल इकट्ठा होनेके चिह्न ।

खूब भोजन करके पीछेसे मिर्चकी, सोंठकी, पीपलामूलकी अथवा पीपलकी फँकी मारनेसे खाया हुआ भोजन पच जाता है, और तीन चार घंटे पीछे खूब कड-कडाकर भूख लगती है। इससे बहुतसे लोगोंने यह सिद्धांत निकाल लिया है कि मिर्च मसाला आदि चीजें भोजनको पचानेके लिए अत्यंत उपयोगी हैं। परतु यह उनका भ्रम है। एक गाड़ीमें पाँच या छः लोगोंके सवार हो जानेपर अधिक बोझके कारण जब

घोडा मुश्किलसे चलता हो तब वारंवार चाबुक लगानेसे वह तेज चलता और नियत स्थान पर शीघ्र ही पहुँचा जरूर देता है, किंतु यह समझकर कि चाबुक मारनेसे घोडा अधिक बोझ खींच सकता है यदि कोई मूर्ख गाडीवाला नित्य ही पॉच सात आदमियोंको बैठाकर चाबुक-की मारसे घोडेको चलाया करे तो भला फिर घोडेका शरीर कै दिन चलेगा ? किरायेकी गाडियोंके घोड़ोंकी उम्र जो बहुत थोड़ी होती है, इसका कारण क्या है ? इसका कारण यही है कि भाड़ा अधिक कमा-नेके लालचसे गाडीवाला घोडेको चाबुक मार मारकर उससे सामर्थ्यसे अधिक काम कराता है। इसी लिए उन घोडोंका शरीर बहुत ही शीघ्र शिथिल हो जाता है। ठीक यही हिसाब पेटका भी है । बहुतसा अन्न खाकर मिर्च मसालेके चाबुकसे पेटको जो उस सब अन्नको हजम करनेके लिए लोग विवश करते है सो आरभमें वह (पेट) हजम तो कुछ समय तक जरूर कर लेता है, परंतु नित्य प्रति ही जब ऐसी जबर्दस्ती की जाती है तब वह अधिक काम करते करते थक जाता है और कमजोर भी बेहद हो जाता है। पीछे, जैसे कमजोर हुआ घोड़ा वारंवार चाबुक मारने पर भी तेज नहीं दौड़ सकता, उसी तरह कमजोर हुआ पेट भी यथेष्ट मिर्च मसाले तथा ओषधियोंके खानेसे भोजन पचा-नेका काम अच्छी तरह नहीं कर सकता । बहुतसे मनुष्योंको खूब तेज पदार्थोंके खानेपर भी जो भूख नहीं लगती, उसका कारण यही है। यदि ऐसे लोग तेज पदार्थोंका खाना छोड़कर अत्यंत सादा भोजन, और वह भी बहुत थोडे परिणाममें किया करें, तो उनका पेट थोड़े समयके उपरांत फिर बलवान् हो सकता है । लेकिन अगर वे अपनी पुरानी कुटेवके वश होकर मिर्च मसालेका या तेज औषधियोंका खाना नहीं छोडेंगे तो जैसे अधिक बोझ खींचनेके कारण थका हुआ घोडा थोडे कालमें मृत्युको प्राप्त हो जाता है उसी तरह वे भी थोड़े समयके

उपरांत शरीरमें मैल अधिक वढ जानेके कारण अकालमें मृत्युके पञ्जेमें फँस जायँगे।

अनुचित आहारसे जव इस तरह शरीरके भीतर मैल वढ जाता है, तव पहलेपहल उस मैलका अधिकांश मोटे नलमें या वडी ऑतमें भरता है। उसमेंसे उसे वाहर निकालनेके लिए मल विसर्जन करनेवाले अवयव अपना अपना प्रयत्न करते है। लेकिन अच्छी तरह भोजन पच जानेके पीछे जो मल रह जाता है, उसे वाहर निकालनेकी अपेक्षा इस अनुचित आहारके कारण भरे हुए मैलको वाहर निकालनेमें मल-विसर्जन करनेवाले अवयवोंको वहुत परिश्रम पडता है। शरीरमें जितना मैल साधारण रीतिपर इकट्ठा होना चाहिए उससे अधिक मैल जो इकट्ठा हो जाता है उसे नित्य वाहर निकालते निकालते अधिक परिश्रम पड-नेके कारण मलोत्सर्ग करनेवाले अवयव थक कर वहुत कमजोर पड़ जाते है। वहुतसे वालक अनुचित रीतिपर जव खाते पीते हैं तव हम देखते है कि उन्हें पाखाना वहुत आता है। अधिक पाखाना आना और कुछ नहीं वल्कि शरीरके भीतरसे संचित हुए मैलका निकलना ही है। नित्य प्रति जव अधिक मैल निकालनेका काम अवयवों पर पडता है तव वे अधिक परिश्रम करते करते थक जाते है, और थोडे समयके उपरात शरीरमें सञ्चित हुए मैलको नित्य प्रति वाहर नहीं निकाल सकते। इस लिए मैल शरीरके भीतर इकट्ठा होता रहता है। वड़ी ऑतमें जहाँ जहाँ जगह मिलती है पहले यह मैल वहीं भरता है। जव उसमें कहीं जगह नहीं रहती, तव वह जठर आदि स्थानोंमें व्याप्त होने लगता है। जैसे शराव और सिरका आदि पदार्थ उष्ण स्थानोंमें रहनेसे उवलकर ऊपर आ जाते और सड़ने-गलते लगते हैं उसी तरह शरीरका यह मैल भी सडता तथा ताप या गर्मीसे उवलकर ऊपर उभर आता है। पेटमें अजीर्ण हो जानेका तो हम सभीको अनुभव

हुआ होगा। यह अजीर्ण तब होता है जब पेटमें गया हुआ आहार अच्छी तरह न पचकर मैल या जहर होकर पेटमें रुक जाता है। बड़े नलमें उतरकर दस्तके रूपमें निकल जाय ऐसा तो यह मैल होता नहीं। इस लिए यह सडने लगता है और फिर उबल कर ऊपरको चढने लगता है। जब ऐसी दशा होती है तब पहले खट्टी खट्टी डकारें और हिचकियाँ आने लगती हैं। धीरे धीरे जब यह मैल ऊपर चढता है तब सिर भारी होने लगता है। इस मैलको मस्तकमें जानेसे रोकनेवाले बीचमें कितने ही अवयव होते है। ये अवयव मैलको ऊपर चढंनसे रोकनेकी चेष्टा करते है और मैल ऊपर चढनेका उद्योग करता है। इसी कारण सिर गर्म हो उठता है और यदि मैल अधिक होता है तो बुखार भी हो आता है।

शरीरमें जितने भी रोग उत्पन्न होते हैं, उन सबमें सबसे पहले थोडा या बहुत बुखार तो जरूर ही आता है। बिना बुखार आये कोई भी रोग नहीं होता, और जबतक शरीरमें मैल इकट्ठा नहीं होता तब तक बुखार नहीं आता। क्योंकि, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, बुखारका आना अथवा शरीरका तपना यह और कुछ नहीं केवल शरीरके अवयवोंका 'एक प्रयत्न मात्र है। नाखूनमें अगर एक जरासी फाँस लग जाय तो सारे शरीरमें कितनी पीडा होती है यह सब कोई जानते है। फाँस लग जानेसे शरीरमें एक प्रकारकी हरारत हो आती है, और जब तक नाखूनमें लगी हुई फाँस निकाल न ली जाय तब तक वह हरारत कम नहीं होती। शरीरमें फुड़िया या फुंसीकी तरेरसे भी हरारतका हो आना बहुतोंके अनुभवमें आया होगा। इस प्रकारसे हरारतका हो आना यह सूचित करता है कि शरीरके भीतर जो मैल इकट्ठा होगया है उसे बाहर निकालनेकी शरीरके अवयव चेष्टा कर रहे है। इसलिए हरारतका होना शरीरमें भरे हुए मैलका चिह्न है।

देखनेसे जाना जा सके। बल्कि वह शरीरके अवयवोंके भीतर इकट्ठा होता है। ऐसे रोगियोंके शरीरमें मैलके ऊपर कहे हुए चिह्न प्रकट नहीं होते, बल्कि दूसरे प्रकारके ही चिह्नोंसे उनके शरीरमें इकट्ठे हुए मैलकी पहिचान की जाती है। अर्थात् आकृति तो उनकी भी बिगड जाती है, मगर आकृति बिगडनेके अतिरिक्त उनके शरीरमें जहाँ तहाँ सिकुडनें भी पड़ जाती हैं, अर्थात् खाल ढीली मालूम होती है। जिनके शरीरमें मैल नहीं होता उनके मुखपर अथवा मस्तकपर एक भी झुर्री नहीं होती। बल्कि उनका मुखमंडल शुद्ध और साफ मालूम होता है। उसपर चर्बीकी पतली गद्दी नहीं मालूम होती। उनकी आँखें स्वच्छ और निर्मल होती हैं, और उनमें नसोंकी रेखायें सी नहीं मालूम होतीं। इसके अतिरिक्त उनकी नाक मुखके ठीक बीचों बीच सीधी होती है और अत्यंत पतली या अत्यंत मोटी नहीं होती। उनका मुँह सदैव बंद रहता है। वे कभी मुँह फुलाकर नहीं हाँफते। इसी प्रकार जिनके शरीरमें मल संचित होता है नीदमें उनका मुँह जैसा फैला हुआ या खुला हुआ रहता है वैसा इनका नहीं रहता। और भी, मैलसे रहित शरीरवाले पुरुषोंके होठ सुंदर और सुडौल होते है, किंतु मैलसंयुक्त शरीरवाले रोगियोंके या तो बहुत मोटे मोटे होंठ होते है और मुँहको ढाँकनेके सुन्दर ढक्कनकी नाई नहीं जान पडते। जिन व्यक्तियोंका शरीर मैलरहित होता है उनका मुख अंडेकी आकृतिके समान कुछ कुछ लम्बाई लिए हुए गोल आकार-का होता है। उसमें गड्ढे नहीं होते और जबडा तथा गर्दन दोनों एका-कार नहीं मालूम पडते, बल्कि उन दोनोंको स्पष्ट रीतिपर अलग अलग बतलाती हुई एक रेखा ठीक कानके नीचे तक आती है। उनकी ठुड्ढी गोल होती है। नीचेकी तरफ गड्ढा पडे, इस तरह तिकोनी नहीं मालूम पडती। उनके सिरका पिछला भाग और गर्दन दोनों मिलकर एक होगई हुई नहीं दिखाई देनी चाहिए, बल्कि उन दोनोंको अलग अलग करने-

वाली बीचमें एक स्पष्ट रेखा होनी चाहिए। जिस व्यक्तिके शरीरमें मैल इकट्ठा हो गया होगा वह अपनी गर्दनको दायें बायें सुगमताके साथ घुमा फिरा नहीं सकेगा। गर्दन घुमाते फिराते समय यदि गर्दनकी खाल तनतनाने लगे तो समझ लेना चाहिए कि शरीरमें मैल एकत्र हो गया है। ऊपर देखते समय और नीचे देखते समय गर्दनकी आगे पीछेकी खाल तनतनानी नहीं चाहिए। जिसके शरीरमें मैल एकत्र नहीं होगा उसके मुखका रंग फीका या पीला अथवा बहुत अधिक लाल नहीं होगा। जो रोगी है अर्थात् जिसके शरीरमें मैल इकट्ठा होगया है उसके मुखका रंग फीका या पीला अथवा बहुत अधिक लाल होगा। किसी किसी समय मुखका रंग काला सगीसा भी पड जाता है। शरीरका रंग यदि बहुत चमकने लगे तो वह भी शरीरके भीतर मेल इकट्ठे होनेका लक्षण है। रोगरहित मनुष्यका मुँह बुढापे तक ताजा और प्रफुल्लित रहना चाहिए।

जिस व्यक्तिके शरीरमें बहुत अधिक मैल संचित होगा उसके अंग प्रत्यगमें फुर्ती नहीं होगी। उसे सदैव गीदडकी नाईं पस्त पडे रहनेकी ही इच्छा होगी। पानीका एक लोटा भरनेकी यदि आवश्यकता हो तो जहाँतक दूसरा कोई उस कामको कर देगा वहाँतक वह व्यक्ति स्वयं उस कामको नहीं करना चाहेगा। हाथ पैर हिलानेकी उसे इच्छा ही नहीं होगी। जबतक कहीं जाने आनेके लिए सवारी मिल सकेगी तबतक उसकी श्रद्धा चार कदम पैदल चलनेकी कभी नहीं होगी। हाथ पैर हिलाना तो मानों उसे मृत्युके समान दुखदाई मालूम होगा।

ऊपर जैसा कहा जा चुका है वैसा यदि शरीरका वर्ण और मुखाकृति किसी व्यक्तिकी बिगडी हुई हो और शरीरके अवयवोंमे फुरती तथा चंचलता न रही हो, तो यह निश्चय समझ लेना चाहिए कि उस व्यक्तिके शरीरमें मैल इकट्ठा हो गया है।

मातापिताके अनुचित आहार-विहारसे बहुतसे बालकोंके शरीरमें गर्भमें ही मैल सचित होकर आता है। अत एव जन्म लेनेके समयसे ही वे बालक बीमार रहते है। ऐसे बालकोंमेंसे अधिकांशकी मृत्यु बालकपन अथवा युवावस्थामें हो जाती है।

अनुचित आहार-विहारसे ही शरीरमें मैल इकट्ठा होता है। क्योंकि अनुचित रीतिपर किया हुआ आहार पेटमें जाकर ठीक ठीक पच नहीं सकता और इस लिए वह शरीरमें मैल उत्पन्न करनेका कारण हो जाता है। अत एव जो लोग शरीरमें मैल इकट्ठा न करना चाहते हों उन्हें आगे लिखी गई बातोंके अनुसार अनुचित आहार करना छोड़ देना चाहिए। जब एक बार शरीरमें मैल इकट्ठा हो जाता है तब पेट और मलोत्सर्ग करनेवाली इन्द्रियाँ दुर्बल पड जाती है। बादको यदि उचित रीतिपर आहार किया भी जाता है तो वह ठीक ठीक नहीं पचता, और जब वह ठीक ठीक नहीं पचता तो शरीरमें और अधिक मैल उत्पन्न करता है। इस प्रकार एक बार जब थोडासा भी मैल शरीरमें इकट्ठा हो जाता है तो फिर मैलके उत्पन्न होने और संचित होते रहने-का काम बड़ी शीघ्रताके साथ चलता है। जिसका परिणाम यह होता है कि नाना प्रकारके रोग शरीरमें बारंबार उत्पन्न होने लगते है। बहुत से बालक जो बारबार विविध रोगोंसे पीडित होते है, इसका कारण यही है कि उनके शरीरमें निरतर मैल इक्ट्ठा होता रहता है।

शरीरके भीतर जो मैल इकट्ठा हो जाता है उसे बाहर निकालनेके लिए शरीरके भीतरके अवयव स्वय कई बार चेष्टा करते हैं। मुँह पर मुँहासोंका निकलना, जगह जगह फोडे-फुंसियाँ निकल आना तथा खालपर खसखसी दानोंका जाहिर हो आना, यह सब भीतरके मैलको बाहर निकालनेके लिए शरीरके अवयवोंका प्रयत्न समझना चाहिए। ऐसी अवस्थामें यदि अन्यान्य प्रकारसे शरीर स्वस्थ भी हो, तब भी यह

निश्चय समझ लेना चाहिए कि शरीरके भीतर मेल इकट्ठा हो गया है। शरीरकी खाल जो इस तरह पर शरीरके भीतरसे मेलको बाहर निकालनेका प्रयत्न करती है उसे उसके इस प्रयत्नमें सहायता पहुँचानेके बदले जो लोग मेलको बाहर निकलने देनेसे रोक देते हैं वे मानो शरीरके भीतर मेलको इकट्ठा रखना ही पसंद करते हैं। उनके इस उद्योगसे मेल वहाँसे हटकर कोई दूसरा रास्ता ढूँढता है और फेफड़ोंमें पहुँचकर या अन्य किसी जगहमें आकर श्वास या अन्य कोई भयंकर बीमारी उत्पन्न करता है।

प्रकृति दस्तोंके रूपमें भी शरीरके भीतर इकट्ठे हुए मेलको बाहर निकालनेका प्रयत्न किया करती है। बहुतसे वैद्य और डाक्टर ऐसी दशामें अफीम मिली हुई या अन्य कोई ऐसी ही ओषधि देकर दस्त बंद करनेकी चेष्टा किया करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि उक्त प्रकारकी ओषधिसे दस्त बंद तो अवश्य हो जाते हैं, परंतु शरीरसे बाहर निकलता हुआ मल पीछे हटकर थोडे दिन या थोडे महीनोंके बाद किसी दूसरे मार्गसे बाहर निकलनेकी चेष्टा करता है और दस्तोंसे भी भयंकर कोई व्याधि उत्पन्न करता है।

पैरों अथवा हाथोंका पसीजना इस बातका प्रमाण है कि शरीरके भीतर मेल इकट्ठा हो गया है। इसीतरह हाथों पेरोंका ठंडा रहना भी शरीरके भीतर मेल संचय होनेका लक्षण है। ऐसी अवस्थामें इस शरीरके भीतर संचित हुए मेलको बाहर निकालनेकी चेष्टा करना ही रोग मेटनेका उत्तम प्रयत्न है, किन्तु यदि दवाके द्वारा हाथों पेरोंमें पसीनेका आना रोका जाय तो यों समझना चाहिए कि हाथोंपैरोंके द्वारा जो शरीरका मेल पसीनेके रूपमें बाहर निकल रहा है वह रोका जाता है। यह मेल जब इसतरह बाहर निकलनेसे रोका जाता है तब वहाँसे हटकर गला सूज जानेकी व्याधि उत्पन्न करता है, अथवा सिरमें कोई रोग उत्पन्न करता है। कभी कभी यह मेल फेफड़ोंमें, हृदयमें अथवा दूसरे किसी भीतरी अवयवमें पहुँचकर उन अवयवोंमें कोई रोग उत्पन्न करता है।

खाँसीका होना अथवा वहुत अधिक कफका पड़ना भी शरीरमें इकट्ठे हुए मैलका सूचक है।

खाँसीवाले व्यक्तिके यदि कफ अच्छी तरह निकलता है, तो उसे वहुत कुछ लाभ पहुँचता है, क्योंकि इस रीतिसे शरीरके भीतरका मैल वाहर निकल जाता है। किंतु यदि कफको वाहर निकाले विना ही किसी दवाके वलसे खाँसीको एकाएक वंद कर दिया जाय तो जाहिरमें खाँसी मिटगई मालूम होगी, लेकिन परिणाममें शरीरकी अवस्था और अधिक खराव हो जायगी। और यही कारण है जो पहले एक वार जिस ओषधिसे लाभ पहुँचा था, उससे फिर दूसरी वार या तीसरी वार कुछ भी लाभ नहीं पहुँचता।

शरीरमें किसी भी प्रकारकी कोई वेचैनी हो अथवा आलू मालूम होता हो, तो समझ लो कि शरीरके भीतर मैल एकत्र होगया है। शरीरमें जव जव कोई सामान्य अथवा भयकर व्याधि उत्पन्न हो जाय,तव तव यही समझना चाहिए कि शरीरके भीतर थोड़ा अथवा अधिक मैल इकट्ठा जरूर है। कई वार ऐसा देखनेमें आता है कि शरीरके भीतर सालहा सालतक मैल इकट्ठा होता रहता है और वीच वीचमें वहुत साधारणसे रोग हो होकर फिर दूर हो जाते है। इससे वहुतसे लोग यह समझ लेते हैं कि हम पूर्णरूपसे रोगरहित है । लेकिन यह वड़ा भारी भ्रम है। जो व्यक्ति समझदार है वे मुखकी, गर्दनकी, पेटकी और सारे शरीरकी कुरूपता और वेडौलपना देखकर यह समझे विना कभी नहीं रह सकते कि शरीरके भीतर मैल इकठा हो गया है। यदि यह वात अच्छी तरह समझमें न भी आवे तव भी नीचे लिखे उपायोंको काममें लानेमें कोई हानि नहीं। रोगी और रोगहीन दोनों ही प्रकारके व्यक्ति इन उपायोंसे लाभ उठा सकते है। अतएव रोग मेटने और आरोग्यको वनाये रखनेकी इच्छा रखनेवालोंको उचित मालूम पड़े, तो इन निम्न-निर्दिष्ट उपायोंको निशंक होकर आजमाना चाहिए।

सञ्चित हुए मैलको निकालनेके उपाय।

यह बात इससे पहले कही जा चुकी है कि शरीरके भीतर नित्य प्रति जो मैल इक्ट्ठा होता रहता है उसे प्रकृति चार रास्तोंसे शरीरके बाहर निकाल देती है। कितना ही मैल तो 'कार्बोनिक गैस' अथवा भाप आदिके रूपमें फेफड़े बाहर निकाल देते है। कितना ही पसीनेके रूपमें खालके छोटे छोटे छेदों द्वारा शरीरके बाहर निकल जाता है। मूत्रेन्द्रियके मार्गसे मूत्रमें मिले हुए 'यूरिक एसिड' नामक विषैले तत्त्वके रूपमें भी बहुतसा मैल शरीरके बाहर निकलता रहता है, और सबसे अतिम गुदाके मार्गसे शरीरका मल पाखानेके रूपमें नित्य बाहर निकल जाया करता है। शरीरमें जो रोग मौजूद हों उन्हें मेटनेके लिए तथा होनेवाले रोगोंको रोकनेके लिए उत्तम उपाय यही है कि इन ऊपर कहे हुए चार रास्तोंसे मैलको शरीरसे बाहर निकालनेके काममें प्रकृतिको सहायता दी जाय। अंडीका तेल पीनेसे अथवा अजय-पालकी गोली खा लेनेसे दस्त आ जाते है और भीतरका मैल पाखानेके रूपमें बाहर निकल जाता है। इसी तरह 'डाया फोरेटिक मिक्श्चर' 'एंटी पाइरीन' 'फिनासिटीन' अथवा इसी प्रकारकी कोई दूसरी दवाके खा लेनेसे पसीना आकर खालके छिद्रोंके मार्गसे शरीरके भीत-रका मैल निकल जाता है। परंतु ये सब दवाइयाँ विषैली होती है। इसलिए शरीरके भीतरसे मैल निकाल देनेके साथ ही साथ वे शरीरमें कमजोरी और शिथिलता भी उत्पन्न करती है, और शरीरके भीतर उनका विष पहुँचनेके कारण अन्यान्य प्रकारके रोगोंकी उत्पत्ति होती है। अतएव आधुनिक आरोग्यशास्त्रवेत्ता विद्वान् केवल उन्हीं उपायोंको प्रकृतिकी सहायता करनेवाले खरे उपाय मानते हैं जिनके काममें लानेसे शरीरके भीतरका मेल तो बाहर निकल जाय, परतु शरीरमें और दूसरे रोग उत्पन्न न होने पावें। इनके अतिरिक्त दूसरे उपाय आरम्भमें लाभ

भी चाहे पहुँचाते हों, परन्तु उनकी रायमें वे उपाय उत्तम और श्रेष्ठ नहीं है। अच्छा, तो अब संक्षेपसे यह बताना आवश्यक है कि उपर्युक्त आरोग्यशास्त्रियोंके मतसे खरे उपाय कौन कौनसे है।

फेफड़ोंके द्वारा शरीरके भीतरका मल रातदिन बाहर निकला करता है। परंतु बहुतसे लोग अपनी ही मूर्खताके कारण और अपनी ही कुटेवोंसे फेफडोंको कमजोर कर लेते है। शरीरका जो अवयव नित्य प्रति काममें आता रहता है वह बलवान् बना रहता है। विपरीत इसके जिस अवयवका नित्य नित्य उपयोग नहीं किया जाता वह दुर्बल पड़ जाता है। जो लोग सीधे हाथका ही अधिकतर उपयोग किया करते हैं उनका बायाँ हाथ सीधे हाथकी अपेक्षा कमजोर पड़ जाता है। इसी प्रकार जो लोग फेफड़ोंका बराबर उपयोग किया करते है उनके फेफडे बलवान् बने रहते है। लेकिन जो लोग फेफड़ोंका निरंतर उपयोग नहीं करते उनके फेफड़े कमजोर पड जाते हैं। यदि तलाश किया जाय तो सौमें नव्वे मनुष्य ऐसे निकलेंगे जो फेफड़ोंका ठीक ठीक उपयोग नहीं करते। कोई पूछे कि फेफड़ोंका ठीक ठीक उपयोग होता किस तरह है? इस तरह होता है कि श्वास लेते समय जो वायु बाहरसे भीतर जाती है उससे फेफड़े पूरे पूरे भरे जायँ। हवासे जब फेफड़े पूरे भरे जाते है, तब पहलेपहल पेट और पेटके नीचेका भाग फूलता है। उसके बाद फिर छाती फूलती है। छोटे छोटे बालकोंको साँस लेते और छोडते देखनेसे यह बात समझमें आसकती है। क्योंकि छोटी उम्रके बालक प्राय. कुदरती तरीके पर सॉस लेते है। लेकिन बड़े होनेपर उन्हें स्कूलमें टेढ़े झुककर बैठनेकी आदत पड़ जाती है, और वे कमर कसकर धोती बॉधने लगते है। इससे उनका पेट वगैरः दबा रहता है और इस कारण फेफड़ोंके नीचेका भाग भीतर गये हुए सॉससे पूरा पूरा नहीं भर पाता। अतएव केवल छाती और फेफड़ोंका

तकिया रखनेकी जरूरत नहीं है । कमरके ऊपरका कपडा ढीला कर दो, और शरीरके सभी अग प्रत्यंगोंको ढीला छोड़ दो। हाथोंको दोनों तरफ लंबा लंबा फैला दो। इसके उपरांत प्रसन्न [illegible] चित्तसे नाकके दोनों छेदोंकी राहसे धीरे धीरे भीतरको श्वास खींचो । प[illegible]हले तो धीरे धीरे पेटको भीतर खींचे हुए श्वाससे भरो । पेट भर जा[illegible]नेके बाद फिर भी श्वास खींचते रहो, और तब तक खींचो जब तक[illegible]य कि छाती भी हवासे पूरी पूरी न भर जाय । छातीका ऊपरका [illegible]त भाग पूरा पूरा भरजाने तक श्वास बार बार खींचते रहो। इस रीतिसे [illegible] फेफड़ोंमें जितनी हवा भरी जा सके उतनी भरो। इसके उपरात फिर [illegible]ते हैं [illegible] नाकके छेदोंसे धीरे धीरे फेफड़ोंमें भरी हुई वायुको पूरापूरा बाहर निकालो। यह श्वास लेने और निकालनेकी क्रिया पाँच मिनिटसे लेकर दस मिनिट तक करो। बहुतसे दुर्बल फेफडेवाले व्यक्ति एक ही दो बेर इस रीतिसे श्वास लेने और निकालनेमें हॉफ जायँगे और व्याकुल होकर श्वास प्रश्वास लेना बंद कर देंगे। परतु इस क्रियासे हॉफने लगना ही परम लाभदायक है। अभ्यास हो जानेपर इस तरह श्वास प्रश्वास लेना [illegible]र परम सुगम हो जायगा। आरम्भमें बहुतसे लोगोंके फेफडे दो या [illegible]न सेकिंडमें ही हवासे पूरे पूरे भर जायेंगे, अर्थात् दो या तीन सेकिंडमें जितनी हवा श्वासके साथ भीतर जा सकती है उससे अधिक फेफड़ोंमें नहीं समा सकेगी। मगर धीरे धीरे श्वासके द्वारा खींची गई हवासे फेफड़ोंके भरनेका समय बढ़ता जायगा। पहले अठवाड़ेमें श्वास खींचकर फेफडोंको भरनेमें चार सेकिंड और खाली करनेमें भी चार ही सेकिंडका समय लगाना चाहिए। दूसरे अठवाड़ेमें छः सेकिंड, तीसरेमें आठ सेकिंड, और फिर चौथेमें दस, इसी तरह फेफड़ोंको हवासे भरने और खाली करनेका समय उत्तरोत्तर बढ़ाते जाना चाहिए। सनैः शनैः जब अभ्यास बढ़ जायगा तो आधे मिनिट तक खींची गई हवा फेफडोंमें भर सकेगी, और उतना ही समय फेफड़ोंको

श्वासे खाली करनेमें लगा करेगा। बहुतसे बढे हुए अभ्यासवाले व्यक्तिओंके फेफडोंमें दो मिनिट तक जितनी वायु खिंच सके उतनी भर जायगी। इसलिए धीरे धीरे अभ्यासको बढाना ही मुख्य है। रात्रिको सोने समय भी यही क्रिया की जाय। और दिनमें जब अवकाश मिल सके तभी इसे कर लेना लाभदायक होगा। जितनी हो सके उतनी अधिक वायु फेफडोंमें जानेसे और फिर फेफडोंके पूरा पूरा खाली होनेसे रक्त बहुत अधिक शुद्ध होता है, आरोग्यकी वृद्धि होती है, बुद्धि विशुद्ध होती है, मन स्वस्थ और विचारशक्ति तीव्र होती है। इनके अतिरिक्त और भी बहुतसे लाभ होते हैं।

कसरत करनेसे भी फेफडोंमें अधिक वायु भरनेका कार्य होता है। दौडने, कूदने, तैरने और अन्यान्य प्रकारकी कसरतोंसे भी साँस आने जानेका काम खूब तेजीके साथ चलता है जिससे कि बहुतसी वायु फेफडोंमें भरती और बाहर निकलती है, और शरीरका मैल बहुत कुछ बाहर निकल जाता है। इसलिए शुद्ध हवामें कसरत करना भी परम लाभदायक है।

ऊपर कही हुई रीतिसे श्वास लेने और निकालनेकी तथा कसरतके द्वारा फेफडोंमें वायु भरने और निकालनेकी आदत डालनेसे शरीरके अनेक रोग मिट जाते हैं और नये रोग उत्पन्न होनेसे रुक जाते हैं।

अमेरिकामें श्वास खींचने और रोकनेका एक यंत्र बन गया है। इस यंत्रका नाम है 'स्पाइरो मीटर'। इस यंत्रके माहात्म्यसे बहुत अधिक हवा श्वासके साथ भीतर खींचकर फेफडोंमें भरी जा सकती है और रोकी जा सकती है। इस लिए जो व्यक्ति समर्थ हों, उन्हें उक्त यंत्रसे भी लाभ उठाना चाहिए।

शरीरमेंसे मैल निकालनेवाला दूसरा अवयव है 'मूत्रपिण्ड' अर्थात् Kidneys। अब इस 'मूत्रपिण्ड' नामक अवयवके द्वारा शरीरसे मैल निकालनेकी क्रियाके विषयमें विचार करना चाहिए। जितनी

चाहिए उतना अथवा उससे अधिक जल पीनेसे 'मूत्रपिण्ड' के द्वारा शरीरका भीतरी मैल निकलता है। युरोपमें कितने ही झरनोंका पानी उत्तम और गुणकारक कहा जाता है। इस लिए वहुतसे रोगी उक्त झरनोंके स्थानोंमे जाकर हफ्तों अथवा महीनों रहते हैं। वहॉ रहकर इस धारणासे कि वहॉका पानी उत्तम और गुणकारी है तथा उसके पीने-से रोग मिट जाते हैं वे रोगी जितना पीना चाहिए उसकी अपेक्षा अधिक पानी पीते हैं। अब वात असलमें यह है कि इन जगहोंका पानी दूसरी जगहोंके पानीके समान ही शुद्ध होगा, अथवा कुछ अधिक शुद्ध होगा, परन्तु रोगोंको दूर करनेवाला कोई खास गुण उसमें नहीं होता। लेकिन उस पानीको रोग मिटानेवाला समझकर रोगी लोग मामूलसे अधिक परिमाणमें पीते है। नतीजा इसका यह होता है अधिक परि-माणमें जल पीनेसे 'मूत्रपिण्ड' अर्थात Kidneys की क्रिया वढती है। यानी 'मूत्रपिण्ड' से वहुत अधिक परिमाणमें मूत्र निकलकर शरीरके मैलको वाहर निकालता है। मूत्रके साथ शरीरके भीतर इकट्ठा हुआ मैल जव अधिक परिमाणमे वाहर निकल जाता हैं तव रोग भी मिटने लगता है। यदि रोगी लोग इन स्थानोंमें न जाकर और किसी शुद्ध वायु-वाले स्थानमें रहकर उतना ही जल पीवें, तो उन स्थानोंमे भी उनका रोग उसी तरह मिट जायगा। मतलव यह है कि चाहे जिस स्थानमें रोगी हो, यदि वह अधिक परिमाणमे जल पियेगा तो 'मूत्रपिण्ड' अधिक मूत्र वाहर निकालेगा, और मूत्रके साथ शरीरके भीतरका संचित विष वाहर निकल जानेसे रोग निस्सन्देह मिट जायगा। इस सारी विवेच-नाका तत्त्व यह निकला कि अधिक परिमाणमें जलका पीना शरीरके भीतर इकट्ठे हुए मैलको वाहर निकालनेका दूसरा उपाय है।

अव विचारनेकी वात यह है कि जल किस तरह पीना चाहिए। वहुतसे व्यक्ति भोजनके समय एक आध लोटा जल पी लेते हैं और भोजनके पीछे फिर भी एक दो लोटा चढ़ा जाते हैं। किंतु इस रीतिपर

जल कभी नहीं पीना चाहिए। भोजनके समय अधिक पानी पीनेसे और भोजनके उपरान्त भी तुरंत वहुतसा पानी पी लेनेसे पेटके भीतर भोजन ठीक ठीक नहीं पचता और इससे पेटकी पाचनशक्ति भी मन्द पड जाती हे। जिन लोगोंकी पाचनशक्ति कमजोर हो वे यदि भोजनके समय विल्कुल भी जल न पियें तो वहुत उत्तम हो। भोजनके उपरात एक या दो घटेके भीतर ही पानी पी लेना किसी भी व्यक्तिके लिए लाभदायक नहीं हो सकता। इस लिए अधिक जल पीनेका प्रयोग करनेवालोको चाहिए कि भोजनके अच्छी तरह पच जानेके उपरात कई वेर करके थोड़ा थोड़ा पानी पिऍ। अपने यहॉके आचार्योंने भी कहा है—"जीर्णे वारि वल-प्रदम्"। अर्थात् अन्नके पच जानेपर पिया गया जल शरीरमें वल लाता हे। इस लिए भोजन करनेके तीन घटे वाद जलका पीना अधिक उपयोगी है। तीन घटे वाद भी जो जल पिया जाय वह एकदमसे वहुतसा न पिया जाय वल्कि आध आध घंटेमें एक एक कटोरी जल पीना लाभ पहुॅचानेवाला है। प्रात'कालके समय जव कुछ भी न खाया हो उस समय एक सेर अथवा दो सेर तक जल पी लिया जाय तो पेट और मूत्राशय अच्छी तरह साफ हो जायँगे। किन्तु जिनकी पचनशक्ति दुर्वल हे, उन्हें इस तरहसे निहार मुँह सेर या दो सेर जल एक दमसे नहीं पी जाना चाहिए, वल्कि थोड़ा थोडा करके पीना चाहिए। और भी एक वातका खयाल रखना चाहिए, वह यह कि इस प्रकारसे जो जल पिया जाय वह अत्यत अधिक ठढा न हो। अत्यंत अधिक ठढा पानी पेटको कमजोर कर देता है। जितना ठढा पानी कुएका होता हे वस उतना ही ठढा पीना चाहिए। कुएके ताजी पानीसे अधिक ठंढा पानी नुकसान करता है, इसी लिए जो लोग प्रात:कालको पानी पिया करते हैं वे रातको ढककर रक्खा हुआ पिया करते है। जो लोग विल्कुल निरोग है उन्हें दिन भरमें साढे छ' सेर पानी पी ले-नेका अभ्यास करना चाहिए। दाल, कढी, और रसेदार तरकारी आदि

नरम भोज्य पदार्थोंमें जो जल होता है उसको शामिल करके साढे छः सेर जल पीना उचित है। लेकिन ऊपर कही हुई रीतिपर जल पीनेसे जितना लाभ होता है उससे कहीं अधिक लाभ, जब तक हम जागते रहें, तब तक बराबर दो दो मिनिट या चार चार मिनिटके बाद एक एक चम्मच पानी पीनेसे होगा। मगर जो लोग इस तरह पानी पीनेका नियम करना चाहें उन्हें फिर इसकी जरूरत नहीं कि भोजनके उपरांत तीन घटे तक पानी पिएँ ही नहीं। बल्कि वे भोजन करनेके उपरांत तुरत ही एक एक चम्मच पानी दो दो या चार चार मिनिटके उपरांत पीना शुरू कर दें। इस तरह एक एक चम्मच करके पानी पीनेसे शरीरके भीतर जो विष इकट्ठा हो गया होगा वह पिघल जायगा, पेटमें जो मल बँध गया होगा उसके ढीले पड़ जानेसे कब्ज मिट जायगा, शरीरकी चमडी स्वच्छ हो जायगी, मुँह पर तेज आजायगा, शरीरका वजन बढेगा, खून शुद्ध होकर तेजीके साथ शरीरमें दौड़ेगा, नींद अच्छी तरह आवेगी, श्वास-प्रश्वासकी क्रिया खूब अच्छी तरहसे होने लगेगी, हृदयकी गति तेज हो जायगी और चित्तमें प्रसन्नता आवेगी। अधिक समय तक यदि यह प्रयोग जारी रक्खा जायगा तो जिनके शरीरमें खून कम होगा उनका खून भी बढ़ेगा। पीनेका जल चूनेके परमाणुओंसे रहित जितना शुद्ध होगा उतना ही अधिक और जल्दी लाभ पहुँचावेगा। भापसे उडाया हुआ पानी सबसे अधिक शुद्ध होता है। इसलिए जिन्हें वह पानी मिल सके उन्हें उसका उपयोग करना चाहिए, नहीं तो फिर जैसा जल सुभीतेसे मिल सके वैसा काममें लाना चाहिए। कुएके मधुर अथवा खारे पानीकी अपेक्षा बरसातका मीठा पानी कहीं अधिक उत्तम और लाभदायक होता है। दिनमें अथवा रातमे ऐसा कोई भी समय नहीं है जब कि यह क्रिया न की जा सकती हो। इस रीतिपर जल पीनेकी विधिका जिन्हें पूरा पूरा लाभ प्राप्त करना हो वे एक दमसे एक या आधी कटोरी जल भी न पीऍं। ऊपर कही गई रीतिसे

यदि वे जल पीना जारी रक्खेंगे तो उन्हें लाभ हुए बिना कभी नहीं रहेगा। बल्कि जिन लोगोंको तम्बाकू अथवा अफीमका दुर्व्यसन होगा उनका वह व्यसन भी इस जल पीनेकी क्रियासे छूट जायगा।

शरीरमें रोग उत्पन्न करनेवाले मलको बाहर निकालनेवाला तीसरा अवयव मोटी आँत अर्थात मल विसर्जन करनेवाली इन्द्रिय है। इस इन्द्रियमें इकट्ठा हुआ मल स्वाभाविक रीतिपर जब बाहर नहीं निकलता है तो जहाँका तहाँ इकट्ठा होता जाता है। इसके बाद सड़नेसे और अन्यान्य कारणोंसे उसमें जब उष्णता उत्पन्न हो जाती है तो उसमें जो जलका भाग रहता है वह सूख जाता है—सख्त पड़ जाता है, और इसलिए अपने आपसे बाहर नहीं निकल सकता। परिणाम यह होता है कि पेटमें कब्ज बढ़ता जाता है। मोटी आँतको धोनेवाले यन्त्रसे यह इकट्ठा हुआ मल बहुत अच्छी तरह धोकर साफ किया जा सकता है। लेकिन मोटी आँतको धोकर साफ करनेकी क्रिया जिन्हें सुगम न मालूम पड़ती हो वे नीचे लिखी हुई क्रियाका उपयोग करें, जिससे मलाशयमें उत्पन्न हुई गर्मी शात हो जायगी और मलका बाहर निकलना सभव हो जायगा।

बाजारसे एक जस्तका बना हुआ टब खरीद लेना चाहिए। जो लोग टब न खरीद सकते हों वे ऐसी एक पतीली लेकर काम चला सकते हैं जिसमें वे अच्छी तरह बैठ सकें। टबमें उसकी एक बाजूसे झुककर और सब कपडे उतार कर (धोती भी खोलकर) बैठ जाना चाहिए। जिनके यहाँ टबके बदले बडी पतीली होवे वे पतीलीको दीवारके पास रखकर उसमें बैठें, जिससे कि दीवारका तकिया लगानेको मिल जाय। लेकिन यह कुछ जरूरी ही नहीं समझना चाहिए कि सहारा लगाकर बैठा जाय। जिनकी इच्छा न होवे सहारा न लगावें। टब या पतीलीमें पानी इतना भरना चाहिए कि टूँडीसे लेकर जाँघोंतकका भाग पानीमें डूब जाय। टूँडीसे ऊपर एक या दो अगुल पानी हो तो कोई हर्ज नहीं। टब या पतीलीका

पानी इतना ठंढा हो जितना कि ८४ डिग्री फेरिन हाइटसे लेकर ६८ डिग्री फेरिन हाइट तक हो सकता है। जिनके यहाँ पानीकी गर्मी मापनेवाला थर्मामीटर न होवे वे ऐसा करें कि जितना ठंढा पानी उनके यहाँके मिट्टीके घड़ोंमें होता है, उतना ठंढा पानी टबमें भर दें। बहुतसी जगहोंमें ठढमें घडोंका पानी ६८ डिग्री फेरिन हाइटसे भी अधिक ठढा होजाता है। उस अवस्थामें धातुके वर्तनमें रक्खा हुआ अथवा कुएका ताजा जल काममें ले आना चाहिए। कमजोर अथवा वुड्ढे आदमी बहुत ठंढा पानी बर्दाश्त नहीं कर सक्ते, इसलिए आरंभमें उन्हें कुएके ताजे पानीके तुल्य पानीको काममें लाना उचित है। जैसे जैसे ठंढा पानी बर्दाश्त करनेकी ताक्त बढ़ती जाय वैसे वैसे अधिक ठढा पानी व्यवहारमें लाया जा सकता है। ठढे पानीसे भरे हुए टबमें या पतीलीमें बैठकर एक मोटी तौलियासे टूँडीके नीचेका भाग और दोनों तरफके पेडू विना रुके हुए फुर्तीके साथ खूब रगडना चाहिए। रगडते वक्त बहुत जोर लगानेकी जरूरत नहीं, सिर्फ जल्दी जल्दी और विना रुके हाथ चलाते रहनेकी जरूरत है, जिससे कि रगडे जानेवाले अंगमें साधारण रीतिपर खून तेजीसे दौडने लगे। आरम्भमें पॉच मिनिटसे लेकर दस मिनिट तक इस तरह पेडू और टूँडीसे नीचेके भागको रगडकर स्नान करना चाहिए। धीरे धीरे फिर पन्द्रह बीस मिनिट अथवा और अधिक समय तक टबमें बैठे रहनेमें कुछ हानि नहीं। पानी यदि बहुत ठढा न हो तो आध घंटे अथवा घंटे भर तक बैठे रहनेमें भी लाभ ही होगा। बहुतसे कमजोर व्यक्तियों अथवा बालकोंको सिर्फ दो या तीन मिनिट बैठना ही काफी है। पेटसे ऊपरके अंगमें अथवा टाँगोंमे सर्दी न चढ जाय, इसलिए पैरोंपर कम्बल आदि कोई गर्म कपड़ा डाल लेना चाहिए, और इसी तरह ऊपरके अगको भी किसी गर्म कपड़ेसे ढक लेना उचित है। स्नान कर चुक्नेपर टबमेंसे उठकर भीगे हुए अगमें गर्मी लानेकी जरूरत है। इस

लिए जो लोग चल फिर सकते हों वे कहीं खुली जगहमें जाकर कुछ कसरत करें तो उत्तम। यदि वाहर जाकर कसरत करना न वन पडे, तो घरमें ही वैठकर सारे शरीरको हाथसे खूव रगडना चाहिए। इससे शरीरमें यथेष्ट गर्मी आ जायगी। जो लोग इतना भी न कर सकते हों वे स्नान करनेके वाद कपडा ओढकर चुपचाप सो जायँ। कम जोर व्यक्ति यदि अपने हाथसे शरीरको इतने जोरसे न रगड सकें कि गर्मी आजाय, तो किसी दूसरेसे रगडवा लेना उचित है।

इस तरहसे पेडू और टूँडीके नीचेके अगको रगड़कर दिनमें एक वेर, दो वेर या तीन वेर स्नान करना चाहिए। टवमें केवल उतनी ही देर वैठना चाहिए जितनी देर वैठा जा सके, तथा पानी भी उतना ही ठंढा होना चाहिए जितना ठढा सहन हो सके। टवका पानी रोजका रोज वदल दिया जाय।

इस कटि-स्नानसे पेडूमें और पेटमें जड जमाकर वैठा हुआ रक्ताव-वष्टम्भ नामक रोग, तथा अतिसार, ववासीर, मरोड, वंधकोश, गर्भाशय, मूत्राशय और जननेन्द्रियके समस्त रोग एवं अन्यान्य व्याधियाँ भी मिट जाती हैं। गर्भाशयके वहुतसे रोगोंमें तथा विविधप्रकारके स्त्री-रोगोंमें इस स्नानसे वहुत लाभ पहुँचता है। ज्ञाततन्तु-सम्वधी रोगोंमें तथा मस्तिष्क--सम्वन्धी व्याधियोंमें तो इस स्नानकी क्रियासे विशेषरूपेण लाभ होता है। रोगकी न्यूनाधिकताके अनुसार यह स्नानकी क्रिया भी थोडे अथवा अधिक समय तक जारी रखनी चाहिए। केवल दो चार दिन करनेके उपरान्त ही अश्रद्धाके साथ छोडकर नहीं वैठ रहना चाहिए।

ऊपर कही गई स्नानकी विधिसे कुछ भिन्न नीचेकी विधि है। यह विधि स्त्रीपुरुषोंके जननेन्द्रियसम्वधी रोगोंमें अत्यत लाभ पहुँचानेवाली है।

ऊपरकी विधिमें जो टव या पतीली कही जा चुकी है उसमें लक-ड़ीकी एक छोटी पटली अथवा चौकी रख देनी चाहिए, या जरा ऊँचे पाओंवाली लकडीकी तिपाई, चौकी या ऐसा ही कोई दूसरा काठका आसन

बिछा देना चाहिए। इसके उपरान्त टबमें पानी भरना चाहिए। पानी इतना भरा जाय कि वह टबमें बिछी हुए लकडीकी पटली अथवा चौकीके किनारे तक ही पहुँचे, ऊपर न आवे। इसके बाद रोगी पटली या चौकीके ऊपर बैठ जाय। बैठनेके बाद एक मोटी तौलियाको, या गाढेके गमछेको पानीमें भिगोकर उससे जननेन्द्रियको धीरे धीरे रगडकर धोवे। तौलियामें जितना अधिक पानी आ सके, उतना भरना चाहिए। समूची जननेन्द्रियको अथवा उसके भीतरके आर्द्र चर्मको न धोवे। बल्कि मूत्रेन्द्रियके उस घूँघट मात्रको ही धोवे, जो भीतरके गीले चमडेको ढके रहता है। इसका खूब ध्यान रक्खे कि मूत्रेन्द्रियका केवल यह घूँघट-वाला भाग ही धोया जाता है। दूसरे किसी भागको अथवा भीतर खोल कर कभी नहीं धोना चाहिए। घूँघटका भाग भी हलके हाथसे धीरे धीरे रगड़कर धोया जाय, कड़े हाथसे नहीं। तौलियाका पानी समाप्त हो जाय कि फिर उसे पानीमें डुबाकर धोना जारी रक्खा जाय। इस प्रकार बारबार मूत्रेन्द्रिय धोना चाहिए। इस स्नानकी क्रियामें पैर, जघा, और इसी तरह शरीरका ऊपरी भाग भी सूखा ही रह जायगा। नितम्ब भाग या चूतर यदि थोड़ेसे भीग जायँ तो कुछ हर्ज नहीं। स्त्रियोंको ऋतुकालमें यह स्नान नहीं करना चाहिए। इस स्नानके लिए पानी ५० से लेकर ६० डिग्री फेरन हाइट तककी ठढवाला काममें लाना चाहिए। यदि इतना ठंढा पानी न मिले तो फिर जैसा मिले वैसा ही पानी काममें ले आना चाहिये।

रोगीकी अवस्था और उम्रके अनुसार यह स्नान दस मिनिटसे लेकर एक घंटे तक किया जा सकता है। जाड़ोंकी ऋतुमें रोगीको ठंढ न लग जाय इस बातका विशेष रूपसे खयाल रखनेकी जरूरत है। अत-एव ठंढसे बचानेके लिए उसके पैर और ऊपरी अग गर्म वस्त्रसे ढक देने चाहिए। इस स्नानमें जितने ठढे पानीका उपयोग किया जायगा, उतना ही अधिक लाभ होगा। किंतु फिर भी इतना ठंढा पानी न होना

लक्षण हे। ऐसी अवस्थामें स्नानकी क्रिया बराबर जारी रक्खी जाय। केवल इतना परिवर्तन कर दिया जाय कि रगडनेके लिए मोटी तौलियाके वदले जरा नरम और बारीक कपड़ा काममें लाया जाय। टवमें बिछी हुई पटलीके ऊपर तीन अगुल पानी आजाय इतना पानी टवमें भरकर यदि पटलीपर वेठकर यह उपर्युक्त क्रिया की जाय तो वहुत जल्दी लाभ होना सभव हे। इस रीतिमे क्रिया करनेवालेको पानीकी गर्मी ६० डिग्री फेरिन हाइट से लेकर ७३ डिग्री फेरिन हाईट तक रखनी चाहिए। इतना पानी जव टवमे भरा जायगा कि पटलीसे ३ अंगुल ऊपर हो जाय तो टवमें वेठनेवाले रोगीके चूतर भी पानीमें डूवे रहेंगे।

वहुतसे पाठकोंकी समझमें यह रहस्य ही नहीं आया होगा कि शरीरके दूसरे किसी अवयवको रगडकर धोनेकी वात न कहकर खास मूत्रेंद्रियका धोना ही इस क्रियामें क्यों वताया गया है। इस प्रकारकी शंकाके उत्तरमें कहना यह हे कि इस क्रियामें इस अवयवके अतिरिक्त शरीरका दूसरा कोई भी अवयव उपयोगी नहीं है। इस अवयवमें शरीरके मुख्य मुख्य ज्ञानततुओंके सिरे जितने अधिक आकर मिलते हैं उतने अधिक और दूसरे किसी भी अवयवमे नहीं मिलते। पीठकी रीढके ज्ञानतंतुओंकी घनी शाखाएँ तथा अन्यान्य अनेक ज्ञानततु भी जिनका मस्तिष्कके साथ सम्बध है, इस अवयवमें आकर मिलते है। अतएव इसी अवयवको रगडनेकी क्रियासे शरीरके अधिकाश ज्ञानततुओके ऊपर असर पडता है। शरीरके सम्पूर्ण ज्ञानतंतुओंपर असर पहुँचानेवाली यही जगह है। इस स्थलको यदि जीवनवृक्षका मूल कहा जाय तव भी असंगत न होगा। जिस तरह मूलमें जल सींचनेसे वृक्षके सभी अग प्रत्यंग पुष्ट होते है उसी तरह इस स्थलको रगड़कर धोनेसे सारे शरीरके अवयवोंको लाभ पहुँचता है। ठंढे पानीसे इस स्थलको धोनेसे यह लाभ होता है कि शरीरके भीतर इकट्ठे हुए विषकी जो गर्मी होती है वह शांत हो जाती है। सिर्फ गर्मी ही शात नहीं होती, वल्कि शरीरके ज्ञानतंतु स्पष्ट

रीतिपर बलवान् हो जाते है। सारांश यह कि शरीरके छोटेसे छोटे अवयवसे लेकर बडेसे बड़े अवयव तक इस प्रयोगसे पुष्ट हो जाते है। शस्त्रक्रियासे यदि ज्ञानतंतु छिन्न भिन्न हो गये हों, तो उस अवस्थामें ही केवल इस क्रियासे लाभ नहीं पहुँचेगा। नहीं तो कुछ ही क्यों न हो, लाभ विना हुए रह नहीं सकता।

रोगी मनुष्योंको इस स्नानसे अगणित लाभ होते है। इस स्नानकी क्रियाका अब तक जिस प्रकार वर्णन किया गया है सभव है वह किन्हीं किन्हींको असभ्यता-पूर्ण मालूम पडे। परन्तु जिस प्रयोगमें हजारों रोगियोंके कल्याण तथा लाभकी बात वर्णन की गई हो, उस प्रयोगका सभ्यताके अनुरोधसे न लिखना सभ्यताका अनुचित उपयोग है और रोगियोंके हकमें परम अत्याचार है। अतएव इस प्रयोगका न लिखना घोर पाप है।

जो व्यक्ति रोगरहित है उसे इस क्रियासे कुछ लाभ नहीं होगा, उलटे उसे यह क्रिया जंजाल मालूम पडेगी। किन्तु रोगियोंको तो यह क्रिया इतनी लाभप्रद सिद्ध होगी कि वे प्रसन्नतापूर्वक आवश्यकतासे अधिक समयतक इसे जारी रक्खेंगे।

इस स्नानसे तथा इससे पहले कही गई स्नानकी क्रियासे अनेक प्रकारकी वीर्यसबंधिनी व्याधियाँ दूर होती है। आज कल सैकडा पीछे पौनसौ व्यक्ति ऐसे मिलेंगे जिन्हें कोई न कोई वीर्यसबंधी व्याधि अवश्य निकलेगी। इस स्नानको दिनमें दो या तीन वेर करनेसे तथा मिर्च मसालेसे रहित सादा भोजन करनेसे स्वप्नमें वीर्य गिरने आदिके दुर्बलताजन्य रोग शीघ्र ही दूर हो जाते है।

अब शरीरमेंसे मैलको बाहर निकालनेके पाँचवें उपायका वर्णन किया जाता है। यह बात पहले ही कही जाचुकी है कि प्रकृति पसीनेके रूपमें भी बहुतसा मैल शरीरके बाहर निकाल देती है। अतएव प्रकृतिको सहायता पहुँचानेका उत्तम उपाय यही है कि किसी जहरीली दवाके शरीरमे विना दाखिल किए ही बहुतसा पसीना आवे। सबसे

उत्तम उपाय तो यह है कि व्यायाम अर्थात् कसरतके द्वारा शरीरसे पसीना निकाला जाय। परतु जो रोगी है वे कसरत नहीं कर सकते और निरोग व्यक्ति भी धैर्यके साथ इतनी अधिक कसरत नहीं कर सकते कि शरीरमेंसे बहुतसा पसीना निकलने लगे। अतएव रोगियों और निरोग रहनेकी इच्छा करनेवाले व्यक्तियोंको नीचे लिखी हुई क्रियाको व्यवहारमें लाना चाहिए।

जो तैयार करा सकते हों वे बेतकी बुनी हुई एक ऐसी खाट तैयार करावें जिसपर एक आदमी सो सके। इस खाटपर शरीरके सब वस्त्र खोलकर चित्त लेट जाय। जो लोग खाट तैयार न करा सकते हो वे बैठे ही बैठे इस प्रयोगको कर सकते हैं। खाटपर चित्त लेट जानेके बाद खौलते हुए गरम पानीकी दो पतीलियाँ एक सिरहाने और दूसरी पाँयतेकी ओर खाटके तले रखवा दो। बादको एक ऐसा ऊनी वस्त्र ओढ लो जो सारे शरीरको ढकता हुआ चारों तरफ खाटके नीचे इतना लटकता रहे कि जमीनसे लग जाय। अर्थात् वस्त्रसे रोगीका समूचा शरीर और खाट इस तरहसे ढक जाना चाहिए कि जिससें पतीलियोंके खौलते हुए पानीमेंसे उठी हुई भाप बाहर न निकल जाय। मुँह ढाँपकर सो रहनेमें भी कुछ हर्ज नहीं। पहले तो शायद इस तरह लेट रहनेमें कुछ जी घबड़ावे, परंतु बादको चित्त बहुत हल्का हो जायगा। पसीना आनेमें दो या चार मिनिट लगेंगे। यदि दो चार मिनिटमें पसीना न आवे और पतीलीमेंसे निकलनेवाली भाप कम हो चले, तो आगमें खूब तपाकर लालकी हुई एक ईंट चीमटेसे पकडकर पतीलीमें डाल देनेसे भाप फिर अच्छी तरहसे निकलने लगेगी। इस तरहकी दो या तीन ईंटें पहलेसे ही तपी हुई तैयार रक्खी जायँ। पाँच पाँच या चार चार मिनिटके बाद जब ही मालूम हो कि भापका निकलना कम हो चला है तभी झट एक तपी हुई ईंट पतीलीमें इस तरह डाल देना चाहिए कि पतीलीमेंसे गरम पानीकी छींटें उचटकर रोगीके शरीरपर न पड़ें। इस

रीतिसे पतीलीमेंसे बहुतसी भाप निकलेगी और भापकी गर्मीसे पसीना भी खूब अच्छी तरह आवेगा । शरीरके पिछले भागमें, जब पसीना खूब अच्छी तरहसे आजाय तब चित्तसे पट हो जाय । इससे पेट इत्यादि शरीरके अगले अंगोंमेंसे भी पसीना निकलेगा । इस रीतिसे पसीना निकालनेकी क्रिया पाव घंटे अथवा आध घंटे तक जारी रखनी चाहिए। जो लोग कुर्सीपर बैठकर यह क्रिया करना चाहें उन्हें केवल एक ही पतीली काममें लानी चाहिए । कुर्सीपर बैठकर भी ऊनी वस्त्र इस तरह ओढना चाहिए कि अपना सारा शरीर और कुर्सी ढक जाय तथा वस्त्र चारों ओर जमीन तक लटकता रहे । खोलते पानीकी पतीली कुर्सीके नीचे रखकर आवश्यकतानुसार पाँच पाँच मिनिट बाद एक एक तपाई हुई ईंट ऊपर कहे गये प्रकारसे उसमें डालते रहना चाहिए, जिसमें कि बहुतसी भाप बराबर पतीलीमेंसे निकलती रहे। कुर्सीपर बैठकर जो लोग यह प्रयोग करें वे यदि अपने पाँव एक दूसरी गर्म पानीकी पतीलीपर एक दो लकडीकी चिप्पियाँ रखकर टेक लें तो बड़ा लाभ हो । कुर्सीपर न बैठकर जो लोग जमीन पर बैठकर ही यह प्रयोग करें उन्हें दूसरी पतीली रखनेकी जरूरत नहीं । उन्हें तो केवल यही करना चाहिए कि ऊनी वस्त्रसे सारे शरीरको ढककर (मुँह चाहे ढक लिया जाय और चाहे खुला रखा जाय) गर्म पानीकी पतीली अपने सामने रखकर ओढनेके भीतर कर ली जाय । शरीरमें जहाँ जहाँ रोग पैदा करनेवाला मैल बहुत अधिक इकट्ठा हो गया होगा वहाँ वहाँसे पसीना निकलनेमें बडी देर लगेगी, और रोगीकी इच्छा स्वयं यह होगी कि उन स्थलों पर खूब बहुतसी भाप आवे । अतएव इस इच्छाके अनुसार ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि उन अंगोंपर विशेष रूपसे भाप लगे । बालकोंको भी ऊपर कही गई रीति पर यह भापका स्नान कराया जा सकता है ।

जो व्यक्ति बहुत अधिक दुर्बल हों, अथवा जो बहुत अधिक बीमार

हों, या जिन्हें ज्ञानतंतुओंसे सम्बध रखनेवाला कोई रोग हो, उन्हें यह भापका स्नान या वाष्प-स्नानकी क्रिया नहीं करनी चाहिए। बल्कि वे पहले कहा गया कटिप्रदेशको रगडकर ठंढे जलसे स्नान करनेवाला प्रयोग करें और या आगे चलकर बतलाई गई विधिसे धूप-स्नान करे। इन दोनों प्रकारके स्नानोंसे उन्हें परम लाभ होगा। जिन्हें परम सुगमताके साथ पसीना आ जाता हो वे भी यदि इस वाष्प-स्नानकी क्रियाको न करें, तो कुछ हर्ज नहीं। आठ दिनमे दो बेरसे अधिक यह वाष्प-स्नानकी क्रिया नहीं करनी चाहिए।

वाष्प-स्नानकी क्रियासे जब खूब अच्छी तरह पसीना निकल चुके, तब शरीरके ऊपरसे ओढा हुआ ऊनी वस्त्र उतार डालना चाहिए। इस समय घरके खिड़की, दरवाजे सब अच्छी तरह बंद रखना चाहिए; नहीं तो नंगे शरीरको हवा लग जानेसे श्लेष्म आदि रोग हो जाना सम्भव है। वस्त्र उतारनेके बाद पहले कही हुई कटिप्रदेशको रगडकर ठंढे जलसे स्नान करनेकी क्रियाका प्रयोग करना चाहिए। इस कटिस्नानकी क्रियासे पहले या पीछे ठंढे जलसे सारे शरीरको धोकर स्नान कर लेना चाहिए, जिससे हाथ, पेट, मस्तक और छाती आदि अंग प्रत्यंग सब धुलकर स्वच्छ हो जायँ। इस स्नानसे ठंढ लग जानेकी आशंका नहीं करनी चाहिए। बल्कि यह ठंढे जलका स्नान उल्टा लाभदायक होगा। भट्टीमे बार बार तपाया जाकर ठंढे पानीमें बुझाए जानेसे जैसे फौलादका लोहा उत्तरोत्तर उत्तम और अच्छे पानीका होता जाता है, उसी तरह शरीर भी वाष्प-स्नानसे खूब दृढ और पुष्ट हो जाता है।

ठंढे जलसे स्नान कर चुकनेके बाद शरीरमें इतनी गरमी लानेकी जरूरत है कि जिससे साधारण रीतिपर पसीना आ जाय। जो लोग सशक्त हों वे तो कपड़े पहिन कर खुली हवामें थोडी कसरत कर लें और जो रोगी तथा कमजोर हों वे अच्छी तरहसे ओढ़कर बिछौने पर सो जावें। इससे शरीरमें यथेष्ट गर्मी आ जायगी।

यह वाष्प-स्नानकी क्रिया शरीरके खास खास अग प्रत्यगों पर भी हो सकती है। केवल पेटके ऊपर, गर्दनके ऊपर अथवा मस्तकके ऊपर ही भाप आवे, इस रीतिसे यदि बैठा जाय तो केवल इन ही अग प्रत्यगोंसे पसीना निकलेगा। पेटके ऊपर भापका स्नान करानेसे पेटके सम्पूर्ण विकार तथा स्त्रियोंके आर्तवसम्बंधी रोग मिट जाते हैं। कान, आँख और दाँतमें यदि दर्द होता हो तो उनपर भापका सेक देकर पसीना निकालनेके लिए विशेष प्रकारके यत्र मिलते हैं, जिनसे कि यह प्रयोग सुगमताके साथ हो सकता है। जिनको यह यत्र खरीदनेका सुभीता न हो उनके लिए सारे शरीरको वाष्प-स्नान कराना ही अधिक श्रेष्ठ है।

श्लेष्म, ज्वर, गठिया, जोड़ोंकी सूजन, और यकृत तथा मूत्राशयके रोगोंमें यह वाष्प-स्नान अत्यत लाभकारी है। किंतु ध्यान रहे कि एक अठवाड़ेमें दो वेरसे अधिक यह प्रयोग न किया जाय, क्योंकि इस प्रयोगके अधिक करनेसे शरीरमें कमजोरी आ जाना सम्भव है।

इस वाष्प-स्नानके समान ही गर्म वायुके सेकसे भी पसीना निकालनेकी क्रिया है। भेद केवल इतना ही है कि इस पिछले प्रयोगमें भापके बदले सुलगते हुए कोयलोंकी ऑचसे अथवा 'आल्काहाल' जलाकर उसके सेकसे पसीना निकाला जाता है। हम लोगोंके लिए सुलगते हुए कोयलोंका प्रयोग करना ही अधिक उत्तम है। रोगी एक पटलीपर बैठ जाय, और दहकते हुए कोयले एक पात्रमें भरकर अपने सामने रख ले। इसके उपरांत एक कपड़ेसे अपने सारे शरीरको ढक ले और कोयलोंके वर्तनको भी कपड़ेके भीतर ले ले, परतु इतनी सावधानी रक्खे कि वस्त्र जल न जायँ। दीवारसे सटाकर एक पटली खड़ी करे और उस पटलीके आगे दहकते कोयलोंका पात्र रक्खे। पात्रके सामने पटली बिछाकर स्वयं बैठ जाय, और ओढ़नेके कपड़ेको दीवारसे सटाई हुई पटलीसे दबाकर ऊपर ओढ़ता हुआ अपने बैठनेकी पटलीसे पीछे दबा दे। इस प्रकार कपड़ा जलनेकी आशंका नहीं रहेगी। इसके बाद वाष्प-स्नानकी भाँति इस

क्रियामें भी दो एक ऊनी वस्त्र ऊपरसे ओढ़ ले। याद रहे कि इस क्रियामें मुँह हमेशा खुला रहेगा। यदि मुँह ढाँकनेकी जरूरत ही पड़े तो दो या चार सेकिंडसे अधिक मुँह न ढाँपा जाय। क्योंकि कोयलोंमेंसे कार्बन नामक एक जहरीला पदार्थ निकलता है। श्वासके साथ यह पदार्थ शरीरके भीतर पहुँचकर हानि पहुँचा सकता है। अतएव वस्त्र इस तरह ओढा जाय कि कमसे कम नाक तो अवश्य ही बाहर खुली रहे। एक भीगी तौलियाकी चार पाँच तहें करके सिरपर इस तरह डाल लेना चाहिए कि जिससे समूचा सिर अच्छी तरह आगे पीछेसे ढँक जाय। अंगीठीमें आग यदि यथेष्ट हो तो पाँच या चार मिनिटमें ही पसीना आने लगेगा। बहुत बड़ी अंगीठीकी आँच बहुतोंको असह्य होगी, और बहुतोंको कभी कभी ऐसा भी मालूम पड़ेगा मानों उनके पाँवकी नसें जली जाती हों। यदि ऐसा मालूम पड़े तो उनपर धीरे धीरे भीतर ही भीतर हाथ फेरते रहना चाहिए। पसीना आना जब शुरू हो जाय तब पन्द्रह या बीस मिनिट तक पसीना आने देना चाहिए। सिरपर रक्खा हुआ वस्त्र यदि सूखकर गर्म हो गया हो तो उसे फिर पानीमें भिगोकर और निचोड़कर सिरपर रख लेना चाहिए। इससे मस्तक गर्म नहीं होने पावेगा। पन्द्रह या बीस मिनिटके बाद खूब पसीना निकल आनेपर ऊपर ओढ़ा हुआ वस्त्र हटा देना चाहिए। मगर इस बातकी खूब सावधानी रक्खी जाय कि पसीना निकले हुए शरीरमें हवा न लगे। वस्त्र उतारकर एक कपड़ेके टुकड़ेसे शरीरका सब पसीना पोंछ डाले और फिर ठंढे जलसे भली भाँति स्नान करे। यदि इच्छा हो तो कटिप्रदेशको रगडकर ठंढे जलसे स्नान करे। नहीं तो ठंढे जलसे सामान्य रीतिपर किया गया स्नान ही काफी है। स्नानके पीछे ओढकर एक घंटे तक लेटे रहना अथवा नींद आजाय तो सो जाना अधिक उपयोगी है। यदि हो सके तो स्नानके पीछे सारा शरीर धीरे धीरे दबाया जाय। निरोग व्यक्ति यदि शरीरमेंसे विष निकालनेके लिए यह प्रयोग करें तो उन्हें स्वयं अपने ही हाथसे

अपना शरीर ढाकना चाहिए। इससे शरीरमें खून तेजीके साथ दौडेगा और शरीरमें गर्मी भी बढेगी। जो व्यक्ति निरोग है वे स्नानोपरांत एक घंटा आराम किए विना ही अपने काममें लग जायँ तो कुछ हर्ज नहीं। वाष्पस्नान तथा यह स्नान भोजनसे पहले तो चाहे जब कर ले, परतु भोजनके पीछे कमसे कम तीन घंटेके वाद करना चाहिए। यह प्रयोग करके सोजानेसे रातको नींद भी खूब अच्छी तरह आती है।

यह प्रयोग करते समय पसीना खूब अच्छी तरह आवे तथा खूनमें पैदा हुई जलकी कमी पूरी हो जाय, इसलिए प्रयोग करनेसे पहले अथवा प्रयोगके चलते रहने पर भी एक एक प्याला अथवा प्यास होय तो इससे भी अधिक जल थोड़ी थोड़ी देरमें पी लेना लाभदायक है। प्रयोगके उपरान्त ठंढे जलसे स्नान करनेमें जिन्हें हिचक लगती हो वे थोडे गुनगुने पानीसे स्नान करें। परन्तु ठढे जलसे स्नान करना परम सुखकर मालूम होगा।

इस प्रयोगके विषयमें डाक्टर स्टाकहाम कहते हैं कि निरोग मनुष्यको होनेवाले रोगोंको रोकनेके लिए यह गर्म वायुका स्नान अठवाडमें कमसे कम एक वेर अवश्य करना चाहिए। जो व्यक्ति रोगी हो उन्हें अपने रोगकी न्यूनाधिक अवस्थाके अनुसार नित्य, दूसरे दिन या तीसरे दिन यह स्नान करना उचित है। इसमे दुर्वलता नहीं आवेगी। वल्कि अशक्त रोगी भी इस स्नानसे वलवान् होते जायँगे। पहली ही वार मैल निकल जानेसे कदाचित् रोगीको यह मालूम पडेगा कि शरीरमें कमजोरी आगई है। परन्तु कुछ ही घंटोंके उपरात ऐसा मालूम होगा मानों शरीरमें अधिक शक्ति आगई हो। रुग्णावस्थामें तथा निरोग अवस्थामें दोनों ही दशाओंमें यह प्रयोग लाभदायक है।

१ इस प्रयोगसे शरीरकी चमड़ीका रग निखरकर स्वच्छ हो जाता है और चमडीकी आरोग्य देनेवाली क्रिया इतनी अधिक वढती है कि दूसरे किसी भी स्नानसे उतनी नहीं वढती। इसके अतिरिक्त इस क्रियासे मल निकालनेवाली शरीरकी दूसरी इन्द्रियोंका काम भी वहुत हलका हो जाता है।

२ इस स्नानसे शरीरमें रुधिरकी गति बराबर होने लगती है, और यदि किसी जगह रुधिरकी गॉठ पड गई हो तो वह खुल जाती है।

३ रुधिरको शुद्ध करनेका यह सबसे सरल और सबसेअधिक लाभ पहुँचानेवाला उपाय है। रुधिरके सम्पूर्ण मैलको साफ करनेके लिए यह स्नान रामबाणके समान अव्यर्थ है।

४ इस स्नानसे ज्ञानतंतु भी शान्त और स्वस्थ हो जाते है और मस्तिष्क ठढा और ताजा हो जाता है।

शरीरका रुधिर विगड़ जानेके कारण उत्पन्न हुए सम्पूर्ण रोगोंमें, शरीरके किसी अंगके सूज जानेकी अवस्थामें और शरीरकी त्वचाका व्यापार मन्द पड जानेकी दशामें भी यह गर्म वायुका स्नान अवश्य ही और बहुत अधिक लाभ पहुँचाता है। जब किसी-के जहर चढ गया हो तब, कठमाला रोगमें, राजयक्ष्मामें, त्वचाके रोगोंमें, विषम ज्वरमें, इक्तरा बुखारमें, खाँसीमें, जुकाममें, कफकी बीमारियोंमें, ठसकेके समान एक प्रकारकी व्याधि (croup) में, जोडोंके दर्दमें, सिरके दर्दमे, यकृत् और मूत्राशयके रोगोंमें, पुरानी खाँसीमें, पुराने अतिसारमें, और भी अनेक रोगोमें यह स्नान परम लाभदायक है। ठढ देकर चढ़नेवाले बुखारमें जाडा लगनेसे पहले इस गर्मवायुके स्नानसे अच्छी तरह सारे शरीरसे पसीना निकाल देना चाहिए। तीन चार बेर यह प्रयोग किया जाय और दूसरा कोई उपाय न किया जाय तो भी बुखार अवश्य दूर हो जायगा। भयंकर गठिया रोगमें इस प्रयोगके समान लाभ पहुँचानेवाली कोई दूसरी ओषधि सारे ओषधि-शास्त्रमें नहीं है। इस रोगमें प्रतिदिन यह स्नान करना चाहिए। बहुतोंको दिनमें दो बेर स्नान करनेसे भी इस रोगमें लाभ पहुँचा है। गर्भिणी स्त्रियोंको भी यदि ऊपर कही गई व्याधियोंमेंसे कोई व्याधि हो तो इस स्नानकी क्रियासे अवश्य लाभ पहुँचेगा। इस बातका बिल्कुल भी भय न करना चाहिए कि गर्भिणी स्त्रीको इस

क्रियासे कुछ हानि पहुँचेगी। सैकड़ों गर्भिणी स्त्रियोंने ठीक नवें महीने तक अठवाड़ेमें एक या दो वेर यह प्रयोग करके लाभ उठाया है।

डाक्टर केलोग भी इस गर्मवायुके स्नानकी इतनी ही प्रशंसा करते हैं। उनका कहना है कि बाष्प-स्नानसे जितने लाभ होते हैं उतने ही लाभ इस गर्म वायुके स्नानसे भी होते हैं, और प्रत्येक व्यक्ति विना विशेष खर्चके बड़ी सुगमताके साथ अपने घर पर इस प्रयोगकी व्यवस्था कर सकता है। पसीना लानेके लिए इससे बढ़कर अच्छा दूसरा कोई उपाय नहीं है। मैलेरिया बुखार, आतशक (Syphilis) और पागल कुत्तेका जहर शरीरमेंसे निकालनेके लिए यह प्रयोग परम उत्तम उपाय है।

जो व्यक्ति बेहद मोटे होकर बेडौल शरीरवाले होगए हों उनकी देहकी चर्बी भी इस प्रयोगसे कम हो जायगी और उनका शरीर सुडौल हो जायगा।

पसीनेके रूपमें शरीरके भीतरसे मल निकालनेके ऊपर जो दो उपाय बतलाए गए हैं उनके ही समान एक और भी तीसरा उपाय है। इस तीसरे उपायका नाम है 'धूप-स्नान'। जिस दिन खूब साफ धूप निकली हो ऐसे दिन, अथवा गर्मीकी ऋतुमें यह प्रयोग अच्छी तरह हो सकता है। इस प्रयोगकी विधि निम्न लिखित है —

गजीका एक अँगोछा या दूसरा कोई ओछा कपड़ा पहनकर जहाँ हवा बिलकुल न आती हो, ऐसी जगहमें एक दरी बिछाकर धूपमें लेट जाय। पैरोंमें अगर मोजे हों तो उतार देना चाहिए, और स्त्रियोंको अपनी चोली खोलकर अलग कर देना चाहिए। मस्तक और मुखको धूपकी तेजीसे बचानेके लिए एक बड़ासा केलेका पत्ता मुँहपर डाल लेना चाहिए। यदि वह न मिले तो चाहे जिस वृक्षके छोटे छोटे हरे पत्तोंकी पत्तलसी बनाकर उससे मस्तक और मुँह ढक लेना चाहिए।

इसी तरह पेटको भी एक बड़ेसे पत्तेसे ढक लेना चाहिए। इस प्रकार आधे घंटेसे लेकर डेढ़ घंटे तक धूपमें लेटे रहना चाहिए। जिन रोगि-योंको धूपमें लेटने पर सुगमताके साथ पसीना न आता हो, उन्हें यदि

विशेष कष्ट न मालूम हो तो डेढ़ घंटेसे भी अधिक धूपमें लेटे रहना चाहिए। परन्तु बहुत तेज धूपमे अधिक समय तक यह प्रयोग करना उत्तम नहीं है।

इस प्रयोगके आरम्भमें धूपमें लेटनेके कारण जिनका सिर दुखने लगे अथवा जिन्हे चक्कर आने लगें, उन्हें चाहिए कि आरम्भमें थोड़े ही समय तक धूपमें लेटें। जिन्हें बड़ी कठिनाईके साथ पसीना आता हो अथवा जिन्हें बिल्कुल ही न आता हो, उन्हें यह बात खास तौरसे ध्यानमे रखनी चाहिए।

इस प्रयोगके उपरांत शरीरके भीतरसे छूटनेवाले मैलको बाहर निकालनेके लिए यदि हो सके तो कटिप्रदेशको रगडकर ठंढे पानीवाला स्नान करना चाहिए। इस ठढे पानीके स्नानके अनंतर जिन नाजुक प्रकृतिवाले रोगियोंके शरीरमें आसानीके साथ गर्मी न आवे, उन्हें चाहिए कि वे सिरको किसी कपडेसे ढककर धूपमें बैठें अथवा टहलें। नाजुक प्रकृतिके लोगोंको यह प्रयोग कुछ दुष्कर अवश्य होगा, इस लिए आरम्भमें ही उन्हें यह प्रयोग नहीं करना चाहिए।

इस प्रयोगके करनेके लिए सबसे उत्तम समय सुबह दस बजेसे लेकर तीसरे पहर तीन बजे तक है। भोजन करनेके बाद तुरंत भी यह प्रयोग किया जा सकता है, परन्तु कहीं भोजन ठीक ठीक पचनेमें विघ्न न पड़े, इस लिए एक घंटा ठहरकर किया जाय तो उत्तम।

धूपमें बिल्कुल नंगे होकर लेट जानेसे कुछ लाभ नहीं होगा।— वस्त्र पहिनकर अथवा हरे पत्तोंसे सारे शरीरको ढककर धूपमें लेटनेसे शरीरसे बहुत जल्द पसीना छूटने लगेगा। धूप-स्नानके उपरांत कटिप्रदेशको रगड़कर यदि ठढे जलसे स्नान नहीं किया जायगा तो भी जितना लाभ होना चाहिए उतना नहीं होगा। क्यों कि सूर्य के तापसे जो मैल शरीरके भीतरसे छूटकर बहेगा उसे अच्छी तरह बाहर निकाल देनेके लिए ठढे जलका स्नान परम आवश्यक है। इ

आरोग्य बनाए रखनेके लिए इस बातकी बडी भारी आवश्यकता है कि सूर्यके प्रकाशमें रहा जाय। जहाँ सूर्यका प्रकाश जरा भी नहीं पहुँचता है ऐसी पहाडी गुफाओंमें अथवा घाटियोंमें पेड़ पौधे उगते ही नहीं। मनुष्योंके सम्बन्धमें भी यही बात है। आल्प्स पहाड़की गहरी उपत्यकाओंमें सूर्यका प्रकाश दिनभरमें केवल कुछ ही घटोंके लिए पडता है। इसका परिणाम यह होता है कि उन स्थलोंमें जो मनुष्य रहते है वे कंठमाला आदि अनेक प्रकारके रोगोंसे पीडित रहते है। वहाँकी प्रत्येक स्त्रीकी गर्दनमें गुमड़ी दिखाई देती है, और पुरुषोंका अधिक भाग पागल होता है। परन्तु वहाँसे पहाडके थोड़े ही ऊपर चढकर जो स्थान है वहाँके रहनेवाले तनसे और मनसे दोनों ही प्रकारसे स्वस्थ रहते है। नीचेके स्थानोंमें रहनेवाले लोग ज्यों ही ऊपरके स्थानोंमें चले जाते है त्यों ही उनके रोग दूर हो जाते हैं और स्वास्थ्य सुधर जाता है। इससे यह बात सिद्ध हुई कि आरोग्य पर सूर्यके प्रकाशका ो बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

पेटमें इक्ट्ठे हुए मलको बाहर निकालनेके लिए और इसतरह पेटमें इकट्ठी हुई गर्मीको कम करनेके लिए ऊपर कहे गये उपायोंके साथ साथ पेटमें पट्टी बाँधनेका उपाय भी परम लाभदायक है। जिस तरह राईका प्लास्टर होता है उसी तरह उत्तम मिट्टीको पानीमें सानकर उसे कपडेकी एक पट्टीपर फैला देना चाहिए और यह पट्टी पेटपर बाँध लेना चाहिए। घावपर अथवा सूजनपर भी यह पट्टी बाँध लेनी लाभदायक है।

शरीरमें इकट्ठे हुए मैलको बाहर निकालनेके और भी कितने ही उपाय ले। परतु पुस्तकका विस्तार जितना सोचा था उससे कहीं अधिक बढ़ ग , है, और ऊपर कहे गए उपाय भी रोगोंको टालनेके लिए काफी है। लिए अब यह प्रसंग यहीं समाप्त किया जाता है।

उ ये उपाय सब रोगोंको दूर करनेवाले हैं यह बात है तो सत्य अवश्य, योंि जिन रोगियोंकी दशा बहुत अधिक हीन हो गई है उन्हें भी इनसे

लाभ पहुँचेगा यह बात निश्चयपूर्वक नहीं कही जा सकती। ऐसे रोगियों को तो संभव है कि दूसरी ओषधियाँ भी लाभ न पहुँचावें। लेकिन यह तो निश्चयके साथ कहा जा सकता है कि दूसरी ओषधियाँ जब बिल्कुल व्यर्थ सिद्ध हो चुकी हों तब ये ऊपर कहे गए उपाय रोगकी पीड़ा कई अंशोंमें कम कर देंगे।

इस पुस्तकमें यह उपयोगी विषय बहुत ही संक्षेपमें लिखा गया है। स्वतंत्र पुस्तकमें जिस तरह अनेक मुद्दाओंपर विस्तार हो सकता है वैसा विस्तार इसमें नहीं होसका। फिर भी यदि बुद्धिमान् व्यक्ति सावधानीके साथ इन प्रयोगोंको आजमाकर देखेंगे तो शरीरमें लगी हुई रोग-बाधाको तथा आगे होनेवाली रोग-पीड़ाको दूर करनेमें उन्हें अवश्यमेव सफलता प्राप्त होगी।

मैल शरीरमेंसे एक बार निकल जानेके उपरात फिर भी इकट्ठा न हो इस लिए कैसा भोजन नित्य करना चाहिए यह बात भी इस संक्षिप्त निबंधमें सन्निविष्ट कर देनेका पहले विचार था। किंतु पुस्तिकाका विस्तार अधिक होजानेके कारण यह विषय छोड़ दिया गया है। संक्षेपसे इस समय केवल इतना ही समझ लेना चाहिए कि जिस भोजनमें नमक, मिर्च और अन्यान्य मसाले बहुत कम परिमाणमें पड़े हों ऐसा सादा भोजन किया जाय।

जो लोग इन प्रयोगोंके सम्बंधमें और अधिक विस्तारके साथ जानने की इच्छा रखते हों वे कृपापूर्वक डाक्टर कैलोग, डाक्टर लुईकुहने डाक्टर नीप, डाक्टर निकाल्स, डाक्टर ट्राल, आदि विद्वानोंके रचे हुए अँगरेजी भाषाके ग्रंथोंका अनुशीलन करें।